पराग

स्वाधीनता विशेषांक

अगस्त १९६

१३९वां अंक

फोटो : मधुजय वाचस्पति

[illegible] बाल पुस्तकालय [illegible]

अतापता

मुखपृष्ठ :
आजादी की खुशी में : विद्याव्रत [illegible]

पुरस्कृत कहानियां :
पहला पड़ाव : डा. मस्तराम कपूर ४
रंग बदलते खरबूजे : मालती जोशी १०
सबसे बड़ा राक्षस : शीला [illegible] १४

अन्य सरस कहानियां :
कंजूस का धन : विश्वनाथ [illegible] ३५
टी. बी. का टीका : अवतारसिंह ३६
ताऊ जी पर जांच आयोग : मनोहर वर्मा ५०
गुनाह के कीड़े : इस्मत चुग़ताई ५४

धारावाही 'स्पाई-थ्रिलर' :
डबल सीक्रेट एजेंट (आठवीं किस्त) : [illegible]दर ४४

मजेदार एकांकी :
सोने की गेंद : मिर्ज़ा अदीब ३०

चटपटी कविताएं :
कक्का का छक्का : काका हाथरसी १७
हारे हुए नेता : प्रभाकर माचवे १९
मेंढकी को जुकाम : विनोद रस्तोगी ६६

[illegible] से नीचे आया : [illegible] देवड़ा ६६
[illegible] मामा : कैलाश भारद्वाज ६७
[illegible]दारी : सूर्यकुमार पांडेय ६७

मजेदार कार्टून कथाएं :
छोटू और लंबू : मेहाब २६
बुद्धूराम : सुरजी ५७

अन्य रोचक सामग्री :
दो ऐतिहासिक हंसोड़ : एम. प्रेमी ९
साधना में व्याघात (कार्टून) : पंकज गोस्वामी १३
झगड़े का निपटारा (कार्टून) : " " २१
सवेरे सवेरे (फोटो-कथा) : एम.सी. शर्मा [illegible]

स्थायी स्तंभ :
शीर्षक प्रतियोगिता–६ :
कुछ अटपटे कुछ चटपटे :
छोटी छोटी बातें :
उद्धरण प्रतियोगिता–१०
भोलू भाई की भूलभुलैया–२०
रंग भरो प्रतियोगिता–८६
बच्चों की नई पुस्तकें
खिलौनों का डिब्बा

वार्षिक शुल्क : स्थानीय : रु. ६.०० डाक से : रु. [illegible]

संपादक : आनंद[illegible] एस. प्रे[illegible]

पहला

सर्वोदय बाल पुस्तकालय
पु.सं.
बिजनौर

किशोर-कथा-प्रतियोगिता में
प्रथम पुरस्कार-प्राप्त कहानी

पुलक के सामने बड़ी समस्या थी. पिछले सात दिनों में वह समस्या इतनी उलझ गई थी कि अब कोई आशा सुलझने की नहीं दिखाई दे रही थी. वह गांव के मिडिल स्कूल से आठवीं पास कर चुका था. अब उसे आगे स्कूल में प्रवेश लेना था. स्कूल पिछले सोमवार से
थे. उसे सोमवार को ही स्कूल में उपस्थित
समझाते हैं...ना चाहिए था. किंतु आज गुरुवार के
देखते ही देखते भारी... स्थिति में नहीं था. वह जानता
से साँस लेने लगता ...ी भीड़ होती है कि पहले ही दिन
इसलिए वह अब निराश हो चुका
केवल सात सेकण्डों में है... था कि वह कभी मंडी नहीं
अब मुझे भी आराम से मिल... गी, तो उसे स्कूल में प्रवेश
है. वेपोरब अपना असर दि...
पुलक स्वयं भी जिम्मेवार था.
दूर हो जाता है और आ... पालमपुर के हाई स्कूल में भर्ती हो
भी है और छात्रवृत्ति मिलने की

वि

भी आशा है.' किंतु पुलक पचास मील दूर मंडी के हाई स्कूल में ही जाना चाहता था. माता-पिता के बार बार समझाने पर भी उसने अपनी जिद नहीं छोड़ी. पालमपुर का हाई स्कूल ईसाई मिशनरियों का स्कूल था. उसके प्रिंसिपल एक अंग्रेज थे. छात्रों के ठहरने और खाने-पीने का प्रबंध भी अच्छा था. चूंकि मिडिल परीक्षा में पुलक ने बहुत अच्छे अंक प्राप्त किए थे, अतः उसे छात्रवृत्ति भी मिल सकती थी. सबसे बड़ी बात यह थी कि वह स्कूल पुलक के गांव से कुल तेरह मील दूर था. हर शनिवार को पुलक घर आ सकता था.

किंतु मंडी के स्कूल के प्रति पुलक के मन में जो आक[illegible] था उसके सामने ये सब बातें फीकी थीं.

पड़ाव

उसके कुछ जिगरी दोस्त मंडी के स्कूल में भर्ती हो चुके थे और वह महेश, जिसने मिडिल परीक्षा में उसे पांच अंकों से पछाड़ दिया था, मंडी के स्कूल में ही भर्ती हुआ था. महेश के साथ कई वर्षों से उसकी स्पर्धा रही थी. कभी महेश प्रथम आता था और कभी पुलक. बाहर से दोनों एक दूसरे के शत्रु थे, क्योंकि किसी लड़के ने कभी दोनों को आपस में बातें करते हुए नहीं देखा था. किंतु दोनों मन ही मन एक दूसरे का बहुत आदर करते थे और चाहते थे कि वे कभी अलग न हों. मिडिल स्कूल छोड़ते समय दोनों ने वायदा किया था कि वे मंडी के स्कूल में ही जाएंगे.

किंतु पुलक ये बातें पिता जी को नहीं बता सकता था. उनके लिए ये बातें महत्वहीन थीं. शायद वह इन्हें मूर्खता की बातें कहकर पुलक को झाड़-फटकार भी सुनाते. इसलिए पुलक ने कई बार बहाने बनाए. उसने कहा—'मिशनरियों के स्कूल में पढ़ाई अच्छी नहीं होती. वहां खाने-पीने का भी अच्छा प्रबंध नहीं है. इसके अतिरिक्त वहां हर सुबह ईसाइयों की प्रार्थना बोलनी

—डॉ॰ मस्तराम कपूर

पड़ती है.' प्रार्थना की बात उसने मां को अप्रभावित करने के लिए कही थी. मां के कहने पर ही पिता उसे मंडी के स्कूल में भर्ती करने के लिए तैयार हुए थे.

किंतु पिता जी पिछले सात दिनों से बुखार में पड़े हुए थे. वैद्य ने कहा था कि उन्हें मियादी बुखार है. इन सात दिनों में वह इतने कमजोर हो गए थे कि बिस्तर से उठ पाना भी उनके लिए कठिन था. पचास मील बस का सफर करके पुलक को मंडी के स्कूल में भर्ती कराना उनके लिए असंभव था.

और पुलक के लिए भी यह असंभव था. अभी तक उसकी दुनिया गांव और उसके स्कूल तक ही सीमित थी. गांव भी हिमाचल प्रदेश के एक पिछड़े हुए इलाके का, जहां पानी के नल और बिजली की रोशनी तक नहीं थी. रेडियो और टेलीफोन का उसने नाम भर सुन रखा था. पिता जी के साथ वह एक बार दस मील चलकर रेलगाड़ी जरूर देख आया था. मोटर पर चढ़ने का उसे केवल एक बार अवसर मिला था. अपनी तेरह साल की उम्र में छोटे-से गांव में उसे जो ज्ञान प्राप्त हो सकता था वह तो उसके पास था, किंतु शहर के जीवन से वह बिल्कुल अपरिचित था. पचास मील पहाड़ी सड़क पर बस का सफर करना, फिर मंडी जैसे शहर में पहुंचकर ठहरने का प्रबंध करना और बड़े हाई स्कूल में जाकर स्वयं अपना नाम दर्ज कराना, यह सब पुलक के बस की बात नहीं थी. इस सचाई को वह भी जानता था और उसके माता-पिता भी.

किंतु अब उसका भविष्य खतरे में था. उसका सारा जीवन अंधकार में डूबने वाला था. यदि वह इस बड़े हाई स्कूल में नहीं जाएगा, तो फिर कभी नहीं जा सकेगा. एक साल यदि पढ़ाई बंद हो गई, तो वह सब कुछ भूल जाएगा और हमेशा के लिए निकम्मा हो जाएगा.

उसे लगा जैसे दुनिया की सारी चीजें उसका रास्ता

रोककर खड़ी है. यदि वह अकेले ही वहां जाने की हिम्मत करे तो भी मां उसे नहीं जाने देगी. सोचा था कि पिता जी का बुखार एक-दो दिन में उतर जाएगा, लेकिन वह सात दिन से उन्हें जकड़े हुए है. यदि बुखार एक-दो दिन में उतर भी जाए तो भी वह कम से कम पंद्रह दिन तक बाहर नहीं जा सकेंगे. और स्कूल में तो पहले ही दिन सब जगहें भर जाती हैं. इतने दिन बाद उसे स्कूल में कौन लेगा?

इसी चिंता में डूबा वह अपने घर में बैठा था. बगल के कमरे में पिता जी सोए हुए थे. थोड़ी देर पहले वह पिता जी के पांव दबा रहा था. जब उन्हें नींद आ गई, तो वह उठकर बाहर आ गया था. उसकी नजर कमरे में लगे हुए चित्रों पर बारी-बारी जाती थी. जवाहरलाल नेहरू का एक बहुत पुराना चित्र था, जब वह लाहौर में कांग्रेस के अध्यक्ष चुने गए थे. घोड़े पर बैठे हुए नेहरू जी बिल्कुल युवक दिखाई पड़ते थे. इसके साथ सुभाष और सरदार पटेल के चित्र थे. ये चित्र पुलक ने मेले से स्वयं खरीदे थे. उनके पास ही डा. लोहिया का एक चित्र था, जिसे देखकर पुलक को लगता था कि वह अभी उसकी पीठ पर हाथ रखकर कहेंगे, "अरे यार, चिंता किस बात की? चलो, मैं तुम्हारे साथ चलता हूं." उसी के साथ था स्वामी दयानंद का चित्र, जो बारह साल की उम्र में घर से भागे थे और फिर वर्षों तक ज्ञान की खोज में, गुरु जी की तलाश में जंगलों, पर्वतों और उजाड़ मरुस्थलों में भटक रहे थे.

मां रसोई घर में थी. पुलक की छोटी बहन कमला स्कूल गई थी. पुलक को भी बहुत से काम करने थे. बैलों को सानी-पानी देना था, उनका गोबर उठाना था और बछड़े के लिए कहीं से हरी दूब लानी थी. किंतु उसका मन भारी था. उसमें किसी काम को करने का उत्साह नहीं था.

जब गांव के वैद्य जी आए, तो वह उन्हें नमस्ते करता हुआ खड़ा हो गया. वैद्य जी सीधे पिता जी के कमरे में चले गए. पिता जी जाग गए थे. वैद्य जी ने उनकी नाड़ी देखी और फिर पुलक की मां को पुकार-कर बोले—"पुलक की मां—"

मां रसोई घर से आई, तो वह बोले—"पुलक को तुम स्कूल क्यों नहीं भेज देतीं. वह अब कोई बच्चा थोड़े ही है. तेरह साल का लड़का तो पूरा जवान होता है. वह अपने आप सब काम कर लेगा. इसे आज ही भेज दो."

पुलक की मां बोली—"मैंने सोचा था, इसका बुखार उतर जाता तो. . ."

प्रथम 'पराग' किशोर-कथा—

'पराग' की प्रथम किशोर-कथा-प्रतियोगिता में जिन तीन कहानियों को प्रथम, द्वितीय, व तृतीय पुरस्कार मिले हैं, वे इसी अंक में प्रकाशित की जा रही हैं. इस प्रतियोगिता में भारत भर के उत्साही लेखक-लेखिकाओं से हमें दो सौ से ऊपर कहानियां प्राप्त हुईं. प्रतियोगिता की घोषणा में जिस प्रकार की कहानियों की मांग की गई थी, उसे फिर हम एक बार दोहरा दें :

'हमें मनोवैज्ञानिक व व्यावहारिक पृष्ठभूमि पर ऐसी कथाएं चाहिएं, जो आज के धरातल पर, आज के बाल-पात्रों को लेकर, उनके स्वस्थ व सुखी जीवन के निर्माण के लिए रची गई हों—साथ ही वे इतनी सरल हों कि बच्चों के लिए सुगमता से ग्राह्य हों, इतनी मनोरंजक हों कि वे राक्षसों और जादूगरों की कहानियां भूल जाएं, और वे उनके दैनिक जीवन से सामंजस्य भी स्थापित करती हों.'

से सोच स विचार से हमें जहां कथ्य की नवीनता की तलाश केवल मात्र शैली की सरलता, कथानक की स्वाभाविकता, मता, और बाल-कथाओं की विवादहीन आव-
अब मुझे को अ बाल-पाठकों के लिए अंतरनिहित मार्गदर्शन—
है. गौरव अपना थी. बीस-पच्चीस कहानियां ऐसी हमारे
हर हो जाता है जनपर अंतिम रूप से संपादक मंडल के सभी
विचार करना था. अंत में पुरस्कृत तीन कहा-
ी की दृष्टि टिकी रह गई.

'पहला पड़ाव' शीर्षक कहानी में घटनात्मक कहानियों जैसा कोई पेंच नहीं है. हिमाचल प्रदेश के एक ठेठ गांव के एक सीधे-सादे बालक की यह सीधी-सादी कहानी है. गांव की पढ़ाई समाप्त करने के बाद, वह निकट के ही स्कूल में इसलिए भरती नहीं होना चाहता कि जिस सहपाठी के साथ उसकी इस पढ़ाई के 'खेल' में अव्वल आने की प्रतिद्वंद्विता थी, वह शहर के स्कूल में भरती हुआ था, और सच्ची प्रतिद्वंद्विता का तकाजा था कि दोनों खिलाड़ी एक ही अखाड़े में बने रहें. यहीं से दैनिक जीवन में सुलभ विषम परिस्थितियों के साथ उसका संघर्ष शुरू हो जाता है. पैरों में थकान का बोझ है, कंधों पर थकान उतारने के लिए बिस्तरे का भी भार है—रात के अंधेरे में, सुनसान-बियाबान में, शहर के स्कूल में प्रवेश पाने के लिए आतुर, डरते-सहमते, मील पर मील पार करते इस बालक की एक ऐसी तसवीर पढ़ने वाले के मन पर खिंचती चली जाती है, जो हर मुसाफिर की तसवीर हो सकती है—हर उस मुसाफिर की, जिसने घुटनों के बल से उठकर पहली बार आगे बढ़ना सीखा है, और जिसकी जिंदगी का 'पहला पड़ाव' बाईस ऊबड़-खाबड़, डरावने मीलों के उस पार है—और जहां पहले पड़ाव की सराय का मालिक उसे देख-कर दरवाजे पर 'जगह नहीं है' की तख्ती लटका देता है!

वैद्य जी बीच में ही बोले—"इनका बुखार उतर गया है. लेकिन कमजोरी तो आठ-दस दिन रहेगी ही. तब तक इसे रोकोगी तो फिर स्कूल में इसे कौन लेगा. तुम इसे आज ही भेज दो. लड़का बड़ा हो गया है. सब काम अपने आप कर लेगा."

फिर उन्होंने पुलक की तरफ देखा और कहा—

"क्यों रे पुलक! तुम अकेले चले जाओगे न?"

पुलक ने अपनी तमाम कमजोरियों को दबा डाला और हिम्मत से कहा, "हां, हां, जा क्यों नहीं सकता हूं. लेकिन मां मानती ही नहीं. वह तो मुझे हमेशा बच्चा ही समझती रहेंगी."

वैद्य जी इसपर खिलखिला कर हंस दिए. उन्होंने पुलक के पिता से बात की, तो वह तैयार हो गए. आखिर मां को भी उनकी बात माननी पड़ी.

दूसरे दिन सुबह दस बजे की बस से पुलक को चल देना था. बस पकड़ने के लिए गांव से छह मील दूर बैजनाथ के अड्डे पर जाना था. शाम से ही तैयारियां होने लगीं. मौनिक दर्जी के पास दो जोड़ी कपड़े सीने के लिए दिए थे, उन्हें पुलक ले आया. गांव में एक चक्कर लगाकर वह अपने सब दोस्तों से मिल आया. उसने सब मित्रों से हर महीने पत्र लिखने का वायदा किया.

अपने मित्र बुद्धी को वह बार-बार ताकीद दे आया कि वह बकरी के बच्चे 'मुनमुन' को किसी के हाथ बेचने न दे. उसने मुनमुन को पैदा होते मांग लिया था. तिरमिरे की लकड़ी का जो बल्ला उसने बनवाया था वह उसने प्यारे दोस्त कृष्ण को दे दिया, ताकि वह उसे संभाल कर रखे. अपनी प्यारी गुलेल उसने दीवू को दे दी.

इस तरह अपने सब मित्रों से विदा लेने के बाद जब वह घर लौटा, तो काफी रात हो गई थी. छोटी बहन कमला सो गई थी. पिता जी को भी दूध पीने के बाद नींद आ गई थी. लेकिन मां रसोई घर में काम कर रही थी और कुछ गुनगुना रही थी. पुलक को आज न भूख थी न प्यास, फिर भी मां के कहने पर उसे रोटी खानी पड़ी. घी में मूंग की दाल भून कर मां ने उसके लिए पिन्नियां बना रखी थीं. रास्ते के लिए कुछ पराठे और अचार तैयार था. रात को ही उसने अपने कपड़े-लत्ते, बिस्तर के लिए एक दरी, एक चादर, एक तकिया और एक कंबल सहेजकर रख लिये. रात को कंबल लेने की जरूरत तो वहां गर्मियों में भी पड़ती है. छह-सात किताबें और कुछ जरूरी कागज-पत्र, तीन जोड़े कपड़े, एक सेर पिन्नियों का डिब्बा—ये सब चीजें भी उसने बिस्तर में ही बांध लीं. बिस्तर कुछ भारी तो हो गया, किंतु पुलक उसे एक झटके से उठाकर सिर पर रख

प्रतियोगिता का निर्णय

डा. मस्तराम कपूर बाल-साहित्य के गंभीर अध्येता रहे हैं (परिचय के लिए देखिए 'पराग' अक्तूबर १९६६). हिंदी के बाल-साहित्य को उन्होंने सदैव नवीनतम देने का प्रयत्न किया है. उनकी इस अन्यतम कथा-रचना के साथ 'पराग' परिवार उनका अभिनंदन करता है.

द्वितीय पुरस्कार-प्राप्त कहानी 'रंग बदलते कार्टून' में जिस मनोवैज्ञानिक बाल-प्रवृत्ति की ओर संकेत है, वह प्रौढ़ व्यक्तियों में भी जहां-तहां देखने को मिल जाती है. घर उनके लिए समरांगण होता है, बाहर उनकी नागरिकता जाग उठती है! बचपन में कहां और कैसे इसकी नींव पड़ी थी, इसका पता भी नहीं चलता ही नहीं है. कहानी की रचना में इस प्रवृत्ति का प्रतिकार-पक्ष भले ही आरोपित लगता हो, किंतु अपने आप में वह न सिर्फ मनोरंजक है, बल्कि पर्याप्त स्वाभाविक बन पड़ा है. वह एक ऐसा दर्पण बन जाता है, जिसमें बड़ों के रूप में अपनी ही सूरत गुमराह बच्चों को दिखाई पड़ती है—और बजाए हृदय-परिवर्तन के पुराने नुस्खे के, उनकी तर्क-चेतना ही जागती है.

मालती जोशी का नाम प्रौढ़ साहित्य में अक्सर ही दिखाई पड़ता रहा है. इस प्रतियोगिता में विजय के

दूसरे सोपान पर 'पराग' परिवार बाल-साहित्य के उनके और अधिक अपेक्षाओं के साथ उनका स्वागत करता है.

शीला इंद्र ने इधर अनेक अछूते कथ्यों पर बाल-कथाएं प्रदान की हैं. वह 'पराग' की 'हमारी पसंद' शीर्षक मासिक प्रतियोगिताओं में भी प्रथम पुरस्कार प्राप्त कर चुकी हैं (देखिए पराग के नवंबर '६८ के अंक में 'सरनेम' शीर्षक कहानी और परिचय के लिए देखिए 'पराग' मार्च १९६९). उनकी प्रस्तुत कहानी 'सबसे बड़ा राक्षस' राक्षसी कथाओं के कल्पित राक्षसों से बच्चों का ध्यान हटाकर उस सबसे बड़े यथार्थ राक्षस की ओर ले जाती है, जिसने आज के विद्यार्थी-समाज को अपने पंजे में दबोच रखा है. उस राक्षस के पंजे से छूटने के लिए सुझाए गए उपाय यद्यपि पुराने हैं, लेकिन ऐसे कि बिना प्रयोग में आए, सवालों ही सवालों में पुराने पड़ गए हैं! उन्हें सुझाने के लिए उनकी एप्रोच नई है, और उसके माध्यम-पात्र जीते-जागते हैं, स्वाभाविक हैं.

—श्री चन्द्र

शीला इंद्र आज बाल-साहित्य की प्रथम लेखिकाओं में हैं, और इस क्षेत्र के दूसरे स्तर [illegible] विधा, प्रतिभा से आलोकित है. इस प्रतियोगिता [illegible] कथा के मंच पर 'पराग' परिवार उन्हें अपनी [illegible] अर्पित करता है.

—एस. प्रेम[illegible]

सकता था या पीठ के पीछे बांधकर आसानी से ले जा सकता था.

दूसरे दिन मुंह अंधेरे ही उसे मां ने उठा दिया. हाथ-मुंह धोकर उसने नाश्ता किया. पिता के चरण छूकर उनसे विदा ली. कमला अभी सोई थी. उसके आधे मुड़े हुए हाथ में उसने आठ आने रखे और फिर पीठ पर बिस्तर बांधकर चल पड़ा. मां उसे कुछ दूर तक छोड़ने गई. मां की आंखों में आंसू देखकर उसने अपने आंसुओं को जबर्दस्ती दबा दिया. मां उसे समझाती जाती थी : "संभल कर जाना. वहां किसी से लड़ना-झगड़ना नहीं. रोज सुबह दूध के साथ एक पिन्नी खा लिया करना. जाते ही पत्र लिखना. पैसों की जरूरत पड़े, तो लिख भेजना."

गांव के छोर पर आकर पुलक ने मां के चरण छुए और विदा ली.

'पहला पड़ाव' के लेखक (प्रथम पुरस्कार)

अब वह तेज कदमों से बैजनाथ के बस अड्डे की तरफ चलने लगा. जब तक वह आंखों से ओझल नहीं हो गया, मां उसी जगह पर खड़ी रही. पुलक भी मुड़कर उसे देखता रहा. मोड़ पर रुककर पुलक ने अंतिम बार हाथ उठाकर मां से विदा ली और आगे बढ़ गया.

जब पुलक अपने गांव की सीमा से बाहर निकला, तो अच्छी सुबह हो गई थी. इधर-उधर पंछियों के झुंड उड़ने लगे थे. औरतों की एक टोली बावड़ी से पानी लाने के लिए जा रही थी और एक टोली भरे घड़े सिर पर रखकर चली जा रही थी. कुछ दूर जाने पर ही सूरज निकल आया. उसने अपनी चाल तेज कर दी. लेकिन पीठ का बोझ, जिसे घर पर पुलक ने एक झटके से उठा लिया था, अब भारी लगने लगा था. उसकी टांगें भी ...ने लगी थीं, किंतु पुलक के पास रुककर कुछ ...ने का समय नहीं था. उसे दस बजे की बस ...ी. ...उसके पास नहीं थी, किंतु सूरज के चढ़ने से वह कुछ अनुमान लगा सकता था. क्योंकि वह ...ही घर से निकल पड़ा था, इसलिए दस बजे ...ने में उसे विशेष कठिनाई नहीं दिखाई दी.

जब वह गांव की पगडंडी छोड़कर पक्की सड़क पर आ गया, तो उसका दिल धक-धक करने लगा. अब बैजनाथ का बस अड्डा आधा मील दूर रह गया था. थोड़ी ही देर में वह बस पर बैठा होगा और बस 'घर्रघर्र' करती हुई उसे एक नए प्रदेश में, नए जीवन की ओर ले जाएगी. मन में कुछ भय भी था, कुछ उत्साह और आनंद भी.

बस के अड्डे पर पहुंचकर उसने पीठ से बिस्तर उतार दिया और बस कंपनी के दफ्तर में जाकर पूछ-ताछ करने लगा. उसे पता चला कि बस नौ बजे ही छूट गई है, क्योंकि पिछले सप्ताह से बसों के समय बदल गए हैं. अब दूसरी बस चार बजे की थी, जो रात के दस बजे मंडी पहुंचाती थी.

पुलक को इससे काफी निराशा हुई, लेकिन वह कर ही क्या सकता था! वहीं पर बैठकर वह चार बजे की बस की प्रतीक्षा करने लगा. उसने सोचा, 'रात को दस बजे पहुंचूंगा, तो बस के अड्डे पर बैठकर ही रात बिता लूंगा. फिर सुबह स्कूल पहुंच जाऊंगा.' उसे भूख लगी, तो उसने थैले से निकालकर अचार के साथ दो पराठे खा लिये.

साढ़े तीन बजे बस लगी, तो वह सबसे पहले टिकट लेकर बस में जा बैठा. बिस्तर उसका छोटा-सा ही था, उसे उसने अपनी सीट के नीचे रख लिया.

'जब बस चली, तो उसका दिल जोर-जोर से धड़कने लगा. उसे मां की याद आई, कमला की याद आई और पिता जी का बीमार चेहरा आंखों के सामने आया. उसके गले में जैसे कोई चीज अटकने लगी. उसकी पलकें गीली हो गईं, लेकिन उसने तुरंत आंखों को पोंछकर अपने आपको संभाल लिया.

बस का इतना लंबा सफर वह पहली बार ही कर रहा था. पहाड़ी सड़क के उतार-चढ़ाव में बस बुरी तरह हिचकोले खा रही थी. पुलक को चक्कर आने लगा, पेट में कुलबुलाहट होने लगी. अभी बस दो-तीन मील ही गई थी कि पुलक को उल्टियां आने लगीं. जब बस मोड़ काटने लगती तब तो पुलक की ऐसी हालत हो जाती थी कि अंतड़ियां मुंह को आने लगती थीं. जब बस घट्टे को पार कर एहजू के डाकखाने पर रुकी, तो पुलक ने नीचे उतरकर दो संतरे खरीद लिये. संतरे का रस धीरे-धीरे चूसने से उसकी तबीयत कुछ हल्की हुई.

पांच बजे बस जोगिंदर नगर पहुंच गई. यहां कुछ यात्रियों ने उतरकर चाय पी. एक-दो सवारियां यहां उतरीं, किंतु दस-बारह और चढ़ गईं. बस अब बिल्कुल भर गई.

जोगिंदर नगर के बाद दूसरा पड़ाव गुम्मा पड़ता था. यहां काले नमक की खान है, इसलिए यह अच्छा कसबा बन गया है. एक बहुत ऊंचे पहाड़ की ढलान पर बसा हुआ यह कसबा पुलक ने एक बार देखा था; जब वह पिता के साथ नमक की खान देखने गया था.

जोगिंदर नगर से गुम्मे तक की सड़क बड़ी ऊबड़-खाबड़ और खतरनाक थी. इसमें भी लगभग पचास गज का टुकड़ा तो बहुत ही खतरनाक था. पिछली बरसात में भारी वर्षा के कारण यहां पहाड़ का एक हिस्सा नीचे खिसक गया था, जिसमें कई आदमी और पशु दब-कर मर गए थे. कई दिन तक मोटरों का आना-जाना बंद रहा. फिर पहाड़ को खोदकर एक तंग-सी सड़क बना दी गई थी. सड़क के नीचे लगभग पांच सौ गज की सीधी ढलान थी और ऊपर भी पहाड़ की सीधी सपाट दीवार थी. बसों के ड्राइवर इस पचास गज के टुकड़े पर बहुत संभल-संभलकर बस चलाते थे. बस के यात्री यदि खिड़की से बाहर देखते, तो उनका सिर चकराने लगता था.

पुलक को लगा कि इस पचास गज के टुकड़े को अपनी बस कभी पार नहीं कर पाएगी. वह अभी, अगले ही क्षण गिर जाएगी और नीचे, . . . बहुत नीचे . . खड्ड में गिरकर चकनाचूर हो जाएगी. लेकिन बस धीरे धीरे, संभल-संभलकर आगे बढ़ती गई. कुछ देर में उसने वह टुकड़ा पार कर लिया और तेजी से दौड़ने लगी. बस के यात्रियों ने चैन की सांस ली.

गुम्मे में बस केवल पांच मिनिट रुकी. अगला पड़ाव काफी लंबा था. यह सड़क भी खराब थी. विशेषकर रात के सफर के लिए तो बिल्कुल अच्छी नहीं थी. इसलिए अंधेरा होने से पहले पहले उस पड़ाव पर पहुंचना जरूरी था. इसके अतिरिक्त बादल का एक टुकड़ा अब घना होकर आसमान पर छा गया था. यदि वर्षा हुई, तो सड़क पर फिसलन हो जाएगी और बस चलाने में कठिनाई होगी. यही सोचकर ड्राइवर ने वहां ज्यादा देर रुकना ठीक नहीं समझा.

गुम्मे से अगला पड़ाव लगभग तीन मील दूर रह गया, तो बारिश शुरू हो गई. आंधी के साथ एक तेज बौछार आई. बस के शीशों को बेध कर पानी अंदर आने लगा. छत पर रखा हुआ यात्रियों का सामान भीग गया. पुलक को इस बात की खुशी हुई कि उसने अपना बिस्तर सीट के नीचे रख लिया था. लेकिन बौछार से उसके कपड़े कुछ कुछ भीग गए तथा उसे सरदी लगने लगी. बस की चाल धीमी हो गई और अंधेरा घिरने लगा. एक स्थान पर मोड़ काटते काटते बस का पहिया सड़क से बाहर हो गया और नाली में धंस गया. बस तिरछी होकर रुक गई. बस में बैठे हुए यात्री घबरा गए. लेकिन शुक्र यह हुआ कि बस पहाड़ की उठान की ओर फिसली थी. यदि वह ढलान की ओर फिसलती, तो वह कई फुट नीचे लुढ़क जाती.

ड्राइवर ने बस के पहिए को नाली से निकालने की बहुत कोशिश की, लेकिन वह सफल नहीं हुआ. अब औरतों और बच्चों को छोड़कर सब यात्री बस से नीचे उतर आए और बस को धक्का देने लगे. पुलक भी नीचे उतरकर धक्का देने लगा. जब पहिया नाली

(देखिए पृष्ठ ४२)

दो एतिहासिक हंसोड़

चाचा हुआ

चाचा हुआ के लड़के को किसी ने बेगन दिखाकर पूछा—"यह क्या चीज है?"

लड़के ने कहा—"यह भैंस का अंडा है. इसमें से भैंस का बच्चा निकलता है!"

जब लोगों ने लड़के को यह मूर्खता चाचा को बताई, तो वह बोले—

"खुदा की कसम! यह लड़का अपने बाप से ज्यादा बुद्धिमान है. इसको इस उम्र में ही उन बातों का पता है, जो मुझे बुढ़ापे तक पता न लग सकीं!"

●

एक दिन चाचा घर में आए और श्रीमती से बोले—"दरवाजे पर कुछ मेहमान खड़े हैं, उनकी किसी तरह टाल दो."

उनकी पत्नी दरवाजे पर गईं और मेहमानों से बोलीं—"चाचा घर पर नहीं हैं."

मेहमान बोले—"अभी अभी तो इसी दरवाजे से उन्होंने अंदर प्रवेश किया था. अवश्य अंदर ही होंगे."

उनकी पत्नी ने खंडन किया और मेहमान बहस करने लगे. आखिर चाचा से न रहा गया और खिड़की से झांककर बोले—"आप लोग खामख्वाह इस औरत से बहस कर रहे हैं. जरा अकल से काम लें. संभव है कि घर का दूसरा दरवाजा भी हो और वह व्यक्ति इधर से प्रवेश करके उधर से निकल गया हो!"

नसरुद्दीन ख्वाजा

ख्वाजा नसरुद्दीन अनाथालय के लिए एक कंजूस अमीर से चंदा मांगने गए. नौकर ने बताया कि वह घर पर नहीं हैं. पर ख्वाजा ने कंजूस अमीर को ऊपरी मंजिल की खिड़की के परदे में से झांकते हुए देख लिया था. उन्होंने नौकर से कहा—"अपने मालिक को मेरा सलाम कहना और कहना कि मैं सेवा में हाजिर हुआ था. उनसे यह भी कहना कि जब वह अगली बार घर से बाहर जाएं, तो अपना सिर खिड़की में न छोड़ जाया करें!"

●

ख्वाजा ने अपने लड़के को झरने से पानी लाने को कहा और ताकीद की कि सुराही सख्त तोड़ना. यह कहकर लड़के को एक जोर का थप्पड़ जड़ दिया. एक व्यक्ति ने ख्वाजा से पूछा कि लड़के ने अभी तक तो सुराही तोड़ी न थी फिर आपने उसे थप्पड़ क्यों जड़ दिया?

"तुम ठीक कहते हो," ख्वाजा ने उत्तर दिया, "पर सुराही टूट जाने के बाद मेरे थप्पड़ मारने का क्या लाभ होता!"

—एस. प्रेमी

राम-लक्ष्मण

किशोर-कथा प्रतियोगिता में
द्वितीय पुरस्कार-प्राप्त कहानी

अतुल, असीम की जोड़ी गली-मोहल्ले में भी उतनी ही प्रसिद्ध थी जितनी कि स्कूल में. दोनों भाई रोज जब एकसी यूनीफार्म, एकसे स्वेटर और जूते पहने निकलते, तो देखने वालों के मुंह से बरबस निकल पड़ता—'यह देखो, राम-लक्ष्मण की जोड़ी चली आ रही है!'

भाई तो थे ही, इसलिए रंगरूप मिलता-जुलता होना कोई बड़ी बात नहीं थी. पर विधाता ने विद्या-बुद्धि बांटते समय भी पक्षपात नहीं किया था. यूं तो दोनों की कक्षाएं अलग थीं, अतुल नवीं में था और असीम ग्यारहवीं में, पर दोनों अक्सर परीक्षा में पहले पांच छात्रों में होते थे पढ़ाई के अतिरिक्त भी वे सबके लिए आकर्षण के केंद्र थे. अतुल डिबेट में हमेशा प्रथम आता था, तो असीम अपने स्कूल की क्रिकेट-टीम का कप्तान था. अतुल के गीतों पर सुननेवाले झूम उठते, तो असीम का कविता-पाठ सबको मोह लेता. स्नेह-सम्मेलन हो या पिकनिक पार्टी, दोनों सबपर छाए रहते. दोनों के मित्रों की काफी बड़ी संख्या थी और अपनी अपनी टोली के दोनों सिरमौर थे.

ऐसी थी दोनों भाइयों की जोड़ी—मम्मी-पापा जिनके लिए गर्व से भर उठते थे. वे दोनों उन भाग्यवान बच्चों में से थे, जो घर-बाहर सबकी आंखों के तारे होते हैं. फिर भी एक उदासी थी, जो उनके मम्मी-पापा पर अक्सर छा जाती थी. बात ऐसी बड़ी भी न थी कि शिकायत की जा सके, फिर भी सोचने को मजबूर कर देती थी.

बात यह थी कि यह राम-लक्ष्मण घर में प्रवेश करते ही राम-रावण बन जाते. कब, किस बात को लेकर वे झगड़ पड़ेंगे, इसका कुछ ठीक न था. बचपन में जब ये लोग लड़ते थे, तो मम्मी कभी पुचकार कर, कभी डांटकर और कभी कभी एकाध चपत लगाकर इनको समझा

खरबूज़े

-मालती जोशी

लिया करती थीं. तब यह आशा बनी रहती थी कि अभी बच्चे हैं, थोड़े दिन बाद अपने आप समझ आ जाएगी. पर बच्चे थे कि बड़े होने पर ही नहीं आते थे. अब तो मम्मी में बीच-बचाव करने का भी हौसला नहीं रहा था. जब इन लोगों में जंग छिड़ जाती, तो वह चुपचाप एक कोने में बैठकर, कानों पर हाथ रखे बस सुनती रहती.

और फिर एक बार की बात हो, तो कोई समझाए भी. यहां तो सुबह से ही चरखा शुरू हो जाता :

"बाथरूम में पहले मैं जाऊंगा."
"तूने मेरे तौलिये से हाथ क्यों पोंछे?"
"यह तेल की शीशी तुमने खुली छोड़ी है?"
"मेरा बश तुमने जानबूझकर नीचे गिराया है."
"मेरी मेज पर तुम्हारी कापी क्यों आई है?"
"तुमने मेरी कविता की कापी क्यों खोली?"

मतलब यह कि बीसियों बातें थीं जिनसे झगड़े का श्रीगणेश हो जाता था. फिर उनकी कर्कश चीख-पुकार सुनकर यही लगता कि हे भगवान, कब ग्यारह बजें और कब ये राक्षस घर से विदा हों!

यहां तक कि रात में भी जब तक दोनों सो नहीं जाते, घर में शांति नहीं होती थी. रेडियो पर कोई बढ़िया नाटक आता रहता और दोनों अपनी अपनी पसंद का प्रोग्राम सुनने के लिए

झगड़ते रहते. कई बार तो यह लड़ाई सिर्फ रेडियो की पासवाली कुर्सी को लेकर ही होती थी. अतुल देर तक पढ़ता रहता, तो असीम की आंखों में रोशनी चुभने लगती. असीम पंखा चलाता, तो अतुल का सिर घूमने लगता. कोई बात शायद ही ऐसी हो, जिसमें उनके लड़ने की नौबत न आती हो.

बच्चों के स्कूल चले जाने के बाद मम्मी घूम-घूमकर घर को साफ करने में जुट जातीं. बच्चों के कपड़े किताबें, तसवीरें—सभी कुछ बेतरतीब पड़ा होता और वह बिना किसी शिकवे-शिकायत के उन्हें समेटती जातीं. ऐसा करते हुए उनके मन में गुस्से की बजाए प्यार ही उमड़ता. दोपहर भर खटकर वह बच्चों की पसंद का नाश्ता बनाकर आतुरता से उनके आने की बाट जोहतीं.

पर खाने की मेज पर आते ही चम्मच गिराने से लेकर चाय छलकाने तक किसी भी बात को लेकर बच्चों में झड़प हो ही जाती और मम्मी का उत्साह और नाश्ते का स्वाद जहां का तहां रह जाता.

पापा शाम को थके-हारे जब लौटते, तो घर में ऐसा ही कुछ वातावरण होता. बच्चे खेल के मैदान जा चुके

इन सब बातों से मम्मी कभी कभी बेहद थकान का अनुभव करतीं. दोनों के लिए एक से स्वेटर बुनते हुए उनकी अंगुलियां थक-सी जातीं. पापा कहते, "कुछ दिनों के लिए न हो तो अपनी मां के यहां हो आओ न! कुछ चेंज हो जाएगा."

मम्मी अपनी बड़ी बड़ी आंखों को और भी बड़ी करके कहतीं—"इन शैतानों को यहां छोड़कर! ना बाबा! किसी दिन एक-दूसरे के प्राण ही ले लेंगे!"

बल्कि वह तो इतना करती थीं कि घर पर कोई मेहमान भी आ जाते, तो बच्चों को भरसक बाहर ही रखतीं. डर लगा रहता कि कोई ऐसी-वैसी बात न हो जाए, नहीं तो कितनी हंसी होगी, कौन जाने!

उस दिन भी ऐसा ही हुआ.

नीलम आंटी आई थी उस दिन. पूरे दस साल बाद मम्मी से मिली थीं. मम्मी ने अपनी इस बचपन की सहेली को दिन भर के लिए बुला लिया था.

दिन कितनी हंसी-खुशी में बीत गया कि समय का पता ही न चला. मम्मी ने बढ़िया बढ़िया खाने बनाए थे. आंटी भी बच्चों के लिए सुंदर सुंदर उपहार लाई थीं.

इस कहानी की लेखिका से मिलिए

'पराग' की किशोर-कथा-प्रतियोगिता में द्वितीय पुरस्कार प्राप्त करने वाली श्रीमती मालती जोशी का जन्म स्थान है औरंगाबाद. होलकर कालेज, इंदौर से आपने हिंदी में एम. ए. किया. लेखन का प्रारंभ गीत-काव्य से हुआ. फिर रेडियो नाटक, शब्द-चित्र, कहानी आदि लिखना शुरू किया. आपकी रचनाएं कादंबिनी, मुक्ता, हिंदुस्तान, नई दुनिया आदि में छपती रहती हैं.

पता : चंबल कालोनी, जौरा (अलापुर), जिला मुरैना (म. प्र.).

होते. पर उन्हें जरा भी ख्याल न आता कि उन्होंने मम्मी का पूरा दिन मिट्टी कर दिया है. पापा से कुछ कहा नहीं जाता, पर वह मम्मी का चेहरा देखकर ही सब जान जाते और एक लंबी सांस लेकर चुप ही रहते.

खास खास मौकों पर पापा भी दफ्तर से आते हुए कोई बढ़िया-सी चीज लाते—कैरम बोर्ड, या क्रिकेट का बल्ला या छोटा-सा बैंजो. इन वस्तुओं के लिए वे कई दिन पहले से योजना बनाते और कई कई तरीकों से बजट में इनको फिट करते. किताबों का तो उन्हें बेहद शौक था. 'भारत के पक्षी', 'संसार के मानचित्र' जैसी पुस्तकों से लेकर कहानी की किताबों तक वह बड़ी खूबी से चुनते थे. उस समय उनकी आंखों में अपने प्यारे बच्चों की छवि तैरती होती. पर घर आते ही उनकी सारी खुशी हवा हो जाती. बच्चों के चेहरे पर खिले प्रसन्नता के फूल देखने का उनका अरमान धरा रह जाता और उनके सामने होती छीना-झपटी, चीख-पुकार और फिर मुंह फुलाकर दोनों बच्चों का बाहर चले जाना. बांटकर खेलना या पढ़ना जैसे उन्होंने सीखा ही नहीं था.

और सब से प्यारी थी आंटी की बातें. दिन भर वे लोग उसकी प्यारी प्यारी बातें सुनते रहे.

शाम को चायपान के बाद संगीत का प्रोग्राम बना. नीलम आंटी ने अपने पति के साथ एक पहाड़ी गीत गाया. उनकी इस पहल के कारण मम्मी को भी गाना पड़ा. गालिब की एक गजल सुनाकर उन्होंने छुट्टी पाई. पापा जी से जिद की गई, तो उन्होंने ठेठ पंडिताऊ ठाठ में एक श्लोक पढ़कर सबको खूब हंसाया.

अब अतुल की बारी थी. मम्मी ने आंटी को बताया कि अतुल अपने स्कूल का 'मुकेश' है, तो नीलम आंटी और भी उत्सुक हो उठीं और उन्होंने मुकेश की ही कोई चीज गाने का अनुरोध किया.

अतुल अपना अभ्यस्त पोज बनाकर बैठ गया और कमरे में—'हरी हरी वसुंधरा, नीला नीला ये गगन'—के स्वर घूमने लगे. सभी झूम उठे. असीम ने अनजाने ही कुर्सी की पीठ पर ताल देनी शुरू कर दी. ताल का ज्ञान तो उसे था नहीं. उसकी इस बेताल हरकत से अतुल

की आवाज कांपने लगी. एकाध शब्द, एकाध सुर वह भूलने लगा. और गीत जितने शानदार ढंग से उठाया गया था, उतने ही दयनीय ढंग से समाप्त हुआ.

लज्जा और अपमान से आहत अतुल चुप हो रहा. अब असीम अपने कविता-पाठ का जादू दिखा रहा था. हास्य रस की ऐसी ऐसी कविताएं उसे याद थीं कि सब लोग हंस-हंसकर दोहरे हो गए. अतुल के चेहरे का रंग उड़ने लगा. असीम की जीत में उसे अपनी हार नजर आने लगी. वह उठकर अंदर गया और रसोई में जाकर पानी पीने के बहाने उसने दो-तीन गिलास गिरा दिए. बेड रूम की खिड़कियों को खोला और फिर बंद किया. दो बक्से उठाए और फिर रख दिए. मेज को थोड़ा-सा खिसकाया, उसकी दराजें खोलकर कुछ टटोला—फिर एक झटके के साथ बंद कर दिया.

इस शोर-शराबे के कारण सुनने वालों का तो ध्यान बंटा ही, असीम को भी काफी परेशानी हुई. उसे मजबूरन कविता अधूरी ही छोड़ देनी पड़ी. गुस्से में दांत पीसते हुए तुरंत उसने अतुल की मरम्मत शुरू कर दी. अतुल तैयार ही बैठा था. सब लोग दौड़कर बीचबचाव न करते, तो न जाने क्या हो जाता!

मम्मी-पापा शर्म से पानी पानी हो गए. नीलम आंटी जो दिन भर बच्चों की प्रशंसा करते नहीं थकी थीं, जाते-जाते हंसकर कह गईं—"शीला, तुम्हारे बच्चों का बचपन अभी गया नहीं."

उन लोगों को जिद करके रात भर रोकने का मम्मी का विचार था, पर अब उन्होंने जरा भी उत्साह नहीं दिखाया. उनके जाते ही मम्मी ने कुछ कहने को मुंह खोला, पर पापा ने रोक दिया. वह बोले, "देखो, अब ये लोग बड़े हो गए हैं. कुछ कहने-सुनने की सीमा से बाहर हैं. अपने आचरण की जिम्मेदारी अब इन्हीं पर है. तुम्हें शर्मिंदा होने की जरूरत नहीं है."

बच्चे जो एक लंबे-चौड़े भाषण के लिए तैयार थे, पापा की बात सुनकर सहम गए. एक-दूसरे को खा जाने वाली नजरों से देखते हुए दोनों अपने अपने बिस्तरों में जा घुसे.

तीसरे ही दिन शायद रविवार था.

नाश्ते की मेज रविवार के अनुरूप ही सजी हुई थी. मठरी, सेव, गाजर का हलुआ और ब्रेड पकौड़े—बच्चे बाग बाग हो उठे. मुश्किल से एक कौर ही मुंह में दिया होगा कि मम्मी ने कहा, "ये आप फिर उसी बद्रीलाल के यहां से हलुआ लाए हैं?"

"क्यों?" पापा ने कहा,

"क्यों, मेरा सिर! इससे तो किसी कुएं में पैसे डाल आया कीजिए. हजार बार मना किया है, पर आपका तो जैसे वह खानदानी हलवाई है!"

फिर तो पापा भी भड़क उठे और वह जोर की तू-तू-मैं-मैं हुई कि बस! बेचारे बच्चे हाथ में हलुए का चम्मच लिए हुए टुकुर-टुकुर ताकते ही रह गए. हलुए

साधना में व्याघात—

"कमबख्त! यहां कहां से गधा रेंकने लगा! भाई साहब संगीत का अभ्यास कर रहे हैं!"

की मिठास न जाने कहां चली गई थी.

ऐसा ही कुछ दोपहर के भोजन के समय हुआ. मम्मी ने शायद भरवां टमाटर बनाए थे. ऐसे कुछ बुरे भी नहीं बने थे. पर पापा ने कह ही तो दिया—"एकाध बार प्रभा भाभी से सीख ही लोगी, तो छोटी नहीं हो जाओगी. इतने सुंदर टमाटरों का सत्यानाश कर दिया!"

जरा-सी बात थी, पर मम्मी ने आंसुओं का रेला बहा दिया. खाना तो तब भी सब लोग खाते ही रहे, पर अब उसमें स्वाद कहां था?

महीने के दूसरे इतवार को सिनेमा जाने का एक अलिखित नियम-सा था उनका. बच्चों के लिए तो यह उत्सव का दिन होता था. पापा साथ होते थे, खाने-पीने की मौज होती थी. मैटिनी के बाद कुछ शॉपिंग होती और फिर किसी रेस्तरां में शानदार डिनर लेकर सब लोग घर लौटते.

उस दिन बच्चों को कुछ ज्यादा आशा नहीं थी, पर दो बजे जब पापा ने तैयार होने के लिए आवाज दी, तो वे खिल उठे. ठीक तीन बजे तैयार होकर जब सब लोग बाहर निकले, तो पापा ने छूटते ही मम्मी से कहा, "क्या यही एक साड़ी रह गई है तुम्हारे पास?"

मम्मी ने तुनककर कहा, "जी नहीं, आपने तो संदूकें भर दी हैं, जो कहेंगे वही पहन लूंगी!"

असीम, अतुल दोनों स्तब्ध रह गए. यह सच था कि पिछले छह-छह महीनों से मम्मी के लिए कोई साड़ी

(शेष पृष्ठ ६१ पर)

किशोर-कथा-प्रतियोगिता में
तृतीय पुरस्कार-प्राप्त कहानी

सबसे बड़ा

"हूं!" राक्षस ने एक जोर की हुंकार भरी, जैसे किसी ने बड़े-से ढोल को बांस से रगड़ दिया हो! "बताओ वह कौनसा काम है जो मैं नहीं कर सकता?"

एक क्षण को राजकुमार के छोटे-से मस्तिष्क में सारी संभावनाएं घूम गईं. पर वह तो राक्षस ठहरा, क्या मालूम वह क्या कर सकता है क्या नहीं? उसे राक्षस के प्रश्न का उत्तर देना ही है और वह भी प्रथम में ही. उसकी निगाह चारों ओर खड़े हुए प्रियजनों के बुतों पर चली गई, जो उस जादूगर राक्षस के प्रश्नों का उत्तर न दे पाने के कारण पत्थर के हो गए थे. . . और फिर उसने अपनी बंदिनी बनी दीदी को देखा जो अचमरी-सी सींखचों से टिकी बैठी थी, आंसू जिसके गालों पर बह-बहकर सूख चुके थे. बिखरे-उलझे केश और अस्तव्यस्त वेश में वह पागल-सी अपने छोटे भैया को बड़ी निराशा-भरी दृष्टि से निहारे जा रही थी.

"बस, हार गए?" जादूगर दहाड़ा.

चौंककर राजकुमार ने राक्षस को देखा और आंखों में अंगारे भरे चीखा : "क्या तुम अपने तीनों सवालों का उत्तर पाए बिना इस राजकुमारी को छोड़ सकते हो? इन पत्थरों के बुतों को जीवित कर सकते हो?"

"और यदि छोड़ दूं, इन्हें भी जीवित कर दूं, तो?" बुतों की ओर संकेत करके राक्षस गरजा.

"तो क्या तुम नहीं जानते, कि लोग तुम्हें राक्षस

राक्षस

—शीला इंद्र

सर्वोदय बाल पुस्तकालय
पु० सं०
बिजनौर

न कहकर क्या कहेंगे?" राजकुमार भी अकड़कर गरजा. पर उसका गरजना भी कितना प्यारा, कितना मासूम था, जैसे कोई नन्हा प्यारा-सा खरगोश हरी घास पर फुदक रहा हो.

"क्या कहेंगे?" राक्षस ने आश्चर्य से पूछा.

"जो किसी को नहीं सताता और दूसरों का भला करता है, उसको लोग क्या कहते हैं?" राजकुमार ने चैन की सांस ली और बोला. "अब दीदी को छोड़ो, इन पत्थर के बुतों को जीवित करो."

"अभी कैसे? अभी तो मेरे दो सवाल बाकी हैं!" राक्षस ने हंसकर जवाब दिया.

"बाकी कैसे हैं? मैं तुम्हारे तीनों प्रश्नों के उत्तर दे चुका हूं."

राक्षस तिलमिला कर खड़ा हो गया. आवेश और क्रोध के कारण वह थर-थर कांप रहा था. इतने बड़े महा-रथी विद्वान् जिसके सामने नहीं टिक पाए, उसको इतने छोटे-से बालक ने हरा दिया था.

...आलोक को हंसी आ गई. फंस गए न, बच्चू! वाह! नन्हा राजकुमार कितना चतुर निकला!

तभी बाहर किसी ने ज़ोर से कुंडा खटखटाया. किताब हाथ में लिये-लिये वह दरवाज़ा खोलने बाहर चला गया.

एक क्षण को वह किंकर्तव्यविमूढ़ हो गया. आने वाला पहचाना-सा लगने पर भी पहचान में नहीं आ रहा था.

"तुम आलोक हो न? कितने बड़े हो गए हो!" आने वाले ने स्वयं ही अंदर घुसते हुए बड़े प्यार से आलोक की पीठ थपथपाई.

"अरे! आप सुमेर चाचा हैं न?" आलोक प्रसन्नता से किलक कर बोला.

"हां! पहचान गए?" सुमेर चाचा ने हंसकर उसको उठा लिया. फिर नीचे खड़ा करते हुए बोले, "भई, अब तो तुम बहुत बड़े हो गए हो, उठते ही नहीं!"

"हां, अब मैं छह साल का बच्चा थोड़े ही हूं," आलोक ने भी हंसते हुए उत्तर दिया.

"अच्छा, भाई साहब और भाभी कहां हैं? कुसुम कहां है? और. . ."

'सबसे बड़ा राक्षस'
की
लेखिका
(तृतीय पुरस्कार)

"बाबू जी और मां, अशोक, नमिता सब एक जगह बुलावे में गए हैं. दीदी अपनी ससुराल में हैं."

"अच्छा? तो तुम क्या कर रहे हो अकेले घर में? पढ़ रहे हो! कौनसी कक्षा में पढ़ते हो?" आलोक के हाथ की कवर चढ़ी पुस्तक देखते हुए सुमेर चाचा ने पूछा.

"मैं नवीं कक्षा में पढ़ता हूं."

"अच्छा, आलोक, यह तुम क्या पढ़ रहे हो, हिस्ट्री या ज्योग्राफी?" आलोक के हाथ से किताब लेते हुए सुमेर चाचा ने पूछा. फिर अंदर देखते हुए बोले—"अरे! यह तुम क्या पढ़ रहे हो? परियों और राक्षसों की कहानियां! इतने बड़े हो गए तुम और यह पढ़ा करते हो?" आश्चर्य से उन्होंने पूछा.

"यह तो बड़ी अच्छी किताब है, चाचा, बड़ी मजेदार!" आलोक उचककर मेज पर बैठ गया. और सामने कुर्सी पर बैठे चाचा से बोला—"अभी मैं एक कहानी पढ़ रहा था कि एक जादूगर ने, जो बड़ा भयंकर था, एक सुंदर-सी राजकुमारी को बंदी बना लिया है. कोई भी राजकुमारी को नहीं छुड़ा पाया, कोई भी उसके प्रश्नों का उत्तर नहीं दे पाया. बस उसके छोटे-से बारह वर्ष के भाई ने जादूगर के सवालों का वह बढ़िया जवाब दिया, ऐसा उल्लू बनाया उसे, कि बच्चू को छठी का दूध याद आ गया होगा!" आलोक हंसा. "पर, चाचा, उस जमाने में राक्षस होते थे, अब नहीं होते?"

"किस जमाने में होते थे राक्षस?" चाचा ने पूछा.

"उसी जमाने में, जिस जमाने की यह कहानी है," आलोक गड़बड़ा गया.

"कहानी पढ़ गए, पर तुम्हें यह भी मालूम है कि किस जमाने की कहानी है यह?" चाचा ने बड़े गंभीर स्वरों में पूछा.

"यह तो समझ में आया नहीं. . ." आलोक खिसिया-कर बोला.

"तो ऐसी चीज क्यों पढ़ते हो, जिसके बारे में तुम्हें ठीक से पता भी न लग पाए कि किस जमाने की, कहां की बात है?"

"तो आप ही बताइए, चाचा, किस जमाने की है यह कहानी?. . . आप पढ़ लीजिए जल्दी से."

"मुझसे पूछते हो, तो मैं बिना पढ़े ही बता दूं कि यह कहानी इसी जमाने की है, इसी भारत की है!" जैसे बहुत गहरी बात सोचते-से सुमेर चाचा बोले.

"क्या?. . .क्या कहा आपने? आजकल ऐसे राजा, ऐसे राक्षस, ऐसी राजकुमारियां कहां हैं!" आश्चर्य-चकित आलोक अवाक्-सा मेज से उतरकर चाचा के सामने खड़ा हो गया. इतने पढ़े-लिखे चाचा को वह झूठा कैसे समझे.

चाचा पुस्तक उलट-पलट कर देख रहे थे. आलोक की बात सुनकर वह धीमे से मुस्कराए: "हां, आलोक, मैं तो जब से अमरीका से आया हूं, यहां ऐसे ही बिना ताज के राजा-रानी देख रहा हूं. ऐसी ही बंदिनी राज-कुमारियां देख रहा हूं. . .उलझे केश, अस्तव्यस्त वेश, आंसू-सूखे गाल, और बड़े बड़े भयंकर जबड़े फैलाए विकट राक्षस उनके सामने खड़ा देख रहा हूं. बस. . ."

"क्या कह रहे हैं आप, चाचा! मेरी समझ में नहीं आता कुछ भी, मुझे तो कुछ नहीं दिखाई पड़ता. . .आप हंसी कर रहे हैं!" आलोक हंसा.

"हंसी नहीं करता, आलोक, पूरी बात सुनो. मैंने तो यहां पत्थर के बुत देखे हैं. बस, नहीं देखे तो राजकुमार नहीं देखे जो जादूगर के अटपटे प्रश्नों का उत्तर देकर उसको छठी का दूध याद दिला दें." बड़े खोए खोए-से सुमेर चाचा ने उत्तर दिया. "ऐसे राजकुमार देखे मैंने अमरीका में."

"आप कैसी बातें कर रहे हैं, चाचा? मेरी समझ में कुछ नहीं आता," आलोक परेशान-सा बोला.

"ऐसी किताबों को पढ़ोगे, तो क्या समझ आएगा?" चाचा बोले,

आलोक कुछ कहता तभी फिर बाहर कुंडा खड़का. खोला तो बाहर आलोक के पिता जी श्याम बाबू, मां और आलोक के भाई-बहन खड़े थे.

सुमेर को देख वे लोग बहुत ही प्रसन्न हुए. फिर तो

देर सारी बातें चल पड़ीं. सुमेर चाचा ने अमरीका के बारे में बहुतसी बातें बताईं. श्याम बाबू अपने यहां के रिश्तेदारों के हालचाल बताते रहे. बातें तो दो-चार महीनों में ही ढेरों इकट्ठी हो जाती हैं. वह बरस तो बहुत होते हैं.

सुमेर ने तभी श्याम बाबू को बताया कि उसकी भी नौकरी यहीं लग गई है और आफिस की ओर से ही एक बढ़िया छोटा-सा बंगला भी मिल गया है.

आलोक यह सुनकर बेहद खुश हुआ. सुमेर चाचा तो उसे छुटपन से ही बहुत अच्छे लगते थे, पर अब तो और भी अच्छे लगने लगे.

सुमेर श्याम बाबू के सगे मामा के लड़के हैं. दोनों में बड़ा स्नेह है. सुमेर ने कभी यह सोचा ही नहीं कि श्याम बाबू उसके सगे भाई नहीं हैं.

●

उस दिन आलोक स्कूल से लौट रहा था. पैर का एक जूता बहुत फट गया था. उसका तला आगे से अलग हो गया था. मोची के पास गया, तो उसे उसने उठाकर फेंक दिया—"अरे, इस जूते में क्या धरा है? अब नया जूता खरीदो, नया!" खिसियाना-सा आलोक जूते उठाकर घर चला आया. मां से कहा, तो वह एक निश्वास भरकर चुप रह गई. फिर थोड़ी देर बाद बोलीं—"न जाने कौन पापों के दंड रूप में उपजे हो तुम लोग! कहां से लाऊं तुम्हारी फरमाइशें पूरी करने को?" रोनी सूरत लिये आलोक वहां से भी हट गया. दूसरे दिन उन्हीं जूतों में स्कूल चला गया.

पैर उठाने के साथ तला हल्की फट्-सी आवाज के साथ नीचे रह जाता और पैरों की उंगलियां चमक जातीं. खीझ में भरा आलोक घिसट-घिसटकर चलता जा रहा था. ऐसा लग रहा था जैसे उसके पैर में मोच आ गई हो या कोई तकलीफ हो.

तभी उसके पास ही एक कार आकर रुक गई. उसने देखा सुमेर चाचा थे. हंसकर बोले, "अरे आलोक, क्या पैर में चोट आ गई है?"

"नहीं, चाचा, यह बात नहीं है," आलोक बेहद खिसिया गया. उसने झिझकते हुए कहा—"पैर में चोट नहीं लगी है, जूता फट गया है. इस से चला नहीं जा रहा है."

"अच्छा!" कुछ क्षण वह चुप रहे. फिर बोले—"चलो, थोड़ी देर को हमारे घर चलो, फिर तुम्हें तुम्हारे घर पहुंचा दूंगा."

"मां डांटेंगी, चाचा!"

"तुम्हारे घर मैं फोन किए देता हूं. तुम्हारे पड़ोसी वकील साहब का नंबर भाई साहब ने दिया था मुझे."

चाचा का बंगला सचमुच बड़ा सुंदर है. ऐसे ही सुंदर बंगलों को आलोक अक्सर बाहर से बड़ी हसरत से देखा करता है. वे भीतर गए.

कक्का का छक्का

प्रोफेसर अखरोटसे बोले किशमिश लाल,
"मास्साब! हल कीजिए मेरा एक सवाल;
मेरा एक सवाल, समझ में बात न भरती,
मुर्गी अंडों के ऊपर क्यों बैठा करती?"
'सर' ने कहा—"प्रबंध शीघ्र ही करवा देंगे;
मुर्गी के कमरे में कुर्सी डलवा देंगे!"

—काका हाथरसी

चाचा ने फ्रिज में से निकालकर उसे कोका-कोला पिलाया, पेस्ट्री खिलाई, आम खिलाए.

आलोक ने जूते उतार दिए थे और सारे बंगले को घूम-घूमकर देखता रहा. छोटी छोटी क्यारियों में खिले फूल. स्वर्ग क्या इससे कुछ अलग होता होगा? आलोक सोचने लगा. अचानक उसे उस दिन की कहानी याद आ गई और फिर वह चाचा के पास आ गया.

सुमेर चाचा इसी चैयर पर पड़े कोई मैगजीन पढ़ रहे थे.

"चाचा, आज मुझे बताइए न, आपने भारत वर्ष में राक्षस कहां देखे हैं? राजा-रानी कहां देखे हैं?"

चाचा ने मैगजीन एक ओर मेज पर रख दी और एक अंगड़ाई ली. वह आलोक की ओर देख धीमे-धीमे मुस्करा रहे थे? आलोक उत्सुकता से उनको निहार रहा था.

"आलोक!" चाचा एकाएक गंभीर होकर बोले—"तुम्हारा जूता फट गया है, तुमने बनवाया नहीं मोची से?"

आलोक का मुंह उतर गया. बेहद खिसियाया-सा वह झिझकता हुआ बोला—"चाचा, मोची ने बनाने से मना कर दिया. . .और. . ."

"हूं!" चाचा ने एक हुंकार भरी—"अच्छा अपने जूते इधर उठा लाओ."

एक क्षण में इस बंगले में आने का, वहां खाने-पीने-घूमने का आनंद जैसे हवा हो गया. क्यों आ गया

आपकी सफलता सुरक्षित

ग्लोब

के निरिक्षण में

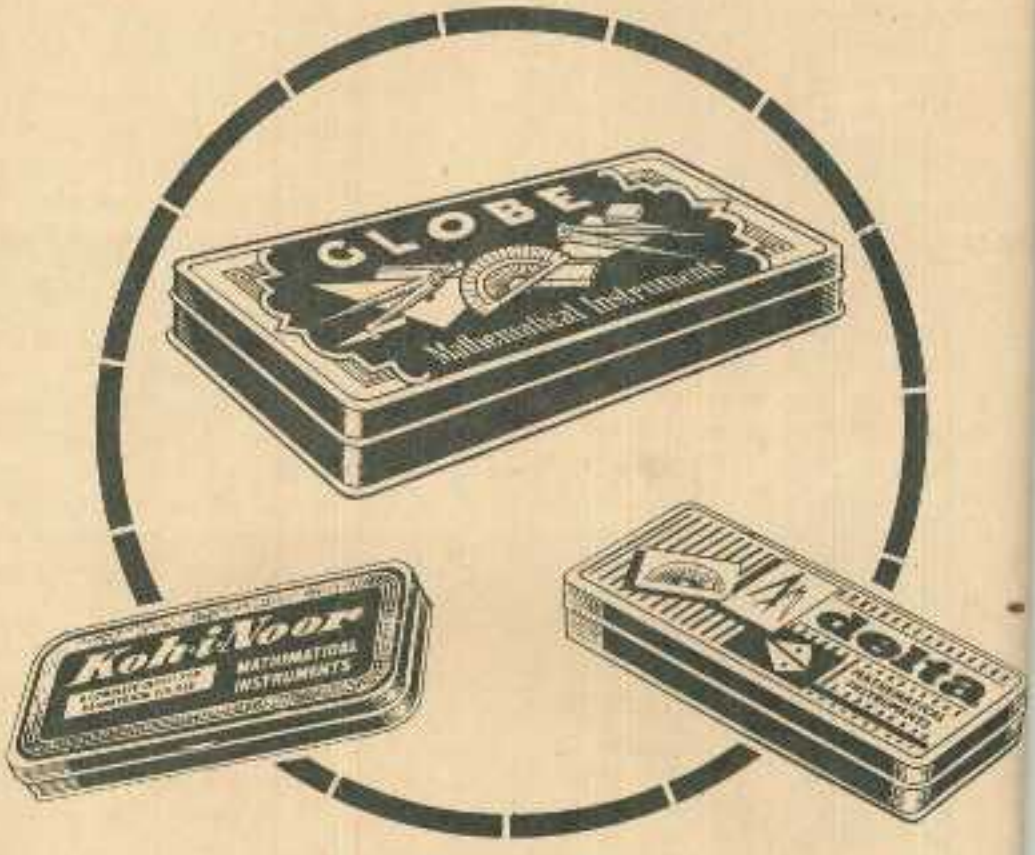

A KASHYAP PRODUCT

अन्य प्रसिद्ध ज्योमेट्री बाक्स - डेल्टा, को-हि-नूर, हार्स इत्यादि

निर्माता :

जी. एस. कश्यप एंड सन्स

पटोदी हाउस, दरिया गंज देहली-६ फोन : २७१६९४

वह यहां ? आलोक को इसके आगे कुछ नहीं सूझ रहा था. चाचा उसे बहुत प्रिय है. उनसे बहुत अपनापन लगता है. पर इतना नहीं कि अपनी गरीबी, अपनी विवशताएं उघाड़ कर दिखाएं. विवश हो वह जूते उठाकर ले आया. चाचा ने बिना झिझक जूते अपने हाथ में ले लिये और फट जूते के अंदर हाथ डाल दिया. क्षण भर में फटी तली में से उनकी उंगलियां चमक उठीं.

फिर उन्होंने सिर उठाकर आलोक को देखा. आलोक सिर झुकाए खड़ा था. उसकी आंखें भर आई थीं.

चाचा भी द्रवित हो उठे थे.—"आलोक, इस कुर्सी पर बैठ जाओ. आओ तुम्हें राक्षस दिखाऊं." और उन्होंने दोनों हाथों से जूते को पकड़कर उसका बड़ा-सा मुंह खोल दिया. "देखो, यह है राक्षस, जिसने यहां के राजा-रानियों को पत्थर का बना दिया है!"

आलोक ने चौंककर चाचा को देखा. उसकी आंखों में आश्चर्य के साथ जैसे जिज्ञासा की परतें तैर रही थीं.

"क्या कह रहे हैं, चाचा, आप? जूते में राक्षस?"

"अब भी नहीं समझे?" चाचा ने मुस्कराने का प्रयत्न किया. "यह है 'गरीबी' लाने वाला राक्षस, जिसने यहां की सुख-समृद्धि रूपी राजकुमारी को बंदी बनाकर पिंजड़े में बंदी रख रखा है. यह राक्षस कुछ प्रश्न पूछता है. उनके उत्तर चाहता है. यह अपने सामने खड़े हजारों जड़ बने नर-नारियों से—तुमसे—पूछ रहा है—"बताओ, मैं क्या नहीं कर सकता?"

सब बुत बने खड़े हैं. कोई भी कुछ नहीं कह पाता है. वे भी—आलोक भी. कल्पनाओं में उड़ा जा रहा है वह!

तभी सुमेर चाचा ने पुकारा—"आलोक!" और आलोक फिर धरती पर उतर आया, पर पूरी तरह से नहीं. घबड़ाहट में एकाएक उसके मुंह से निकल गया—"चाचा, बताइए न, मैं क्या उत्तर दूं?" बात के मुंह से निकलते ही उसे भान हुआ कि वह क्या कह रहा है. उसने लज्जित हो सिर झुका लिया.

"हां, बेटा, मैं तुम्हें बताऊंगा कि तुम क्या उत्तर दो. मुसीबत यही है कि कहानी में एक ही राक्षस था, पर यहां कई राक्षस हमें जकड़ हुए हैं!"

आलोक और भी चकित हो गया—"कई राक्षस? और कौनसे राक्षस हैं, चाचा?"

"सुनोगे? एक है अशिक्षा, दूसरा है आलस्य, तीसरा है कुसंस्कार—मतलब व्यर्थ के दकियानूसी विचारों के पीछे अपना अनिष्ट करते जाना, चौथा है झूठा अहम्... और...और भी कई हैं जिनको तुम आगे जीवन में देखते जाओगे, कि कैसे इन सबने मिलकर भारतीय जीवन को जकड़ रखा है. पर, उनपर विजय राक्षसों की कहानियां पढ़कर नहीं पा सकोगे!"

उस दिन जब आलोक घर लौटा, तो उसके पैरों में नए जूते थे. पर उसके मन को जिस उल्लास ने घेर रखा था वह नए जूतों के कारण नहीं था. वह था उन बातों के कारण जो चाचा ने बताई थीं. उसको जैसे एक नई ज्योति मिली थी, नया दृष्टिकोण मिला था. किसी बात को भी उसने उस रूप में नहीं देखा था, जिसमें चाचा ने दिखाया था.

उस दिन इतवार था. चाचा सुबह ही सुबह अपनी कार से आ गए. साथ में दो बड़ी-सी लौकियां थीं. बता रहे थे उनके ही बगीचे की थीं. अपनी मेहनत से उपजी चीज देखकर कैसी पुलक होती है. वह सुमेर चाचा की प्रसन्न मुख-मुद्रा पर केवल आलोक ही पढ़ पाया था.

उस दिन खाने पर बड़ा ही आनंद आया. खाते-खाते सुमेर चाचा कहने लगे—"मालूम है, भाई साहब, अमरीका में मुझे जब शुरू में पैसों की बहुत दिक्कत हुई, तो मैंने एक होटल में प्लेटें धोने का काम किया और यूनिवर्सिटी की फीस वगैरा जुटाई." आलोक का हाथ कौर तोड़ते-तोड़ते रुक गया—"अरे! सच?"

"हां, वहां सभी काम करते हैं. मालूम है एक बार क्या हुआ शुरू शुरू में. जब गया था तो एक दिन देखा एक बारह-तेरह वर्ष का बच्चा एक जगह से मिट्टी निकाल कर छोटी-सी हाथ-गाड़ी में दूसरी जगह ले जा रहा था. मुझे बड़ा तरस आया. मैंने सोचा, शायद वह गरीब है. सो जेब से एक आधा डालर निकालकर उसे देना चाहा और पूछा कि कहां पढ़ता है? आधा डालर देखकर वह आश्चर्य से मुझे देखने लगा फिर बोला—"आपको कोई काम कराना है?"

"मैंने कहा—नहीं. . .तुम शायद परेशानी में हो?"

"वह मुस्करा कर बोला—'नहीं, हम अमरीकी बच्चे परेशानी में नहीं होते. यह तो मैं काम कर रहा हूं, थोड़ा पैसा जमा कर रहा हूं... वीक एंड में हम कुछ विद्यार्थी घूमने जाएंगे न, उसके लिए.'

हारे नेता

"यह जो आए थे
आज सवेरे
सफेद टोपी पहने
यह इतना क्यों बोल रहे थे?
पापा को कुछ भी तो
वह नहीं देते थे कहने!"
"बेटा,
वह नेता थे
जो चुनाव में हारे,
अपना गुस्सा
वह मुझ पर ही
व्यर्थ उतारें!"

—प्रभाकर माचवे

"मैंने पूछा—तुम्हारे पिता क्या करते हैं? तो, भाई साहब, वह तो हमारी यूनिवर्सिटी के डीन का इकलौता सपूत निकला!"

"अरे!" अब की आलोक के पिता श्याम बाबू के मुंह से निकला. क्षण भर को जैसे वह हतबुद्धि रह गए. फिर बोले—"उन सालों के पास इतना पैसा है! छोटे छोटे बच्चों से ऐसे ओछे काम करवाते शरम नहीं आती?"

सुमेर मुस्करा दिया—"नहीं, भाई साहब, यहां कोई काम ओछा नहीं. यहां छोटे बच्चे भी अपनी सामर्थ्य भर काम करते हैं, और पैसा कमाते हैं. वे मां-बाप के ऊपर बोझा नहीं बनते. वे आत्मनिर्भर होते हैं."

"भई, मेरी समझ में नहीं आती यह बात. अरे भई, बच्चे हैं तो उनकी देखभाल करना हमारा धर्म है. यह क्या छोटे-से बच्चे को काम पर लगा दिया. यह तो नीच लोगों का काम है."

सुमेर चाचा आलोक को देख मुस्करा उठे. आलोक को अपने फटे जूतों की याद आ गई. उसने सिर झुका लिया.

उसी दिन जब आलोक सुमेर चाचा के साथ कमरे में थोड़ी देर को अकेला हुआ, तो झिझकते हुए बोला—"चाचा, क्या यहां ऐसा कोई काम नहीं जो मैं कर सकूं और पैसे जमा करूं?"

चाचा उसे देखकर मुस्करा दिए—"और भाई साहब ने मार लगाई तो?"

"मैं उनसे छिपाकर करूंगा," उसने सीधे चाचा की आंखों में ताका.

"पर, मां-बाप से छिपाकर कुछ भी करना पाप होता है, आलोक!"

"पर छिपाकर मैं कोई पाप नहीं करूंगा, चाचा. मैं चोरी नहीं करूंगा. मेहनत करूंगा. आखिर अमरीकी बच्चे ही हाथ-पैर वाले नहीं होते!"

चाचा हंस दिए—"अच्छा, देखूंगा..." तभी, श्याम बाबू सिगरेट लिये अंदर आ गए और बोले—"भई सुमेर, ताज्जुब होता है कि तुमने अमरीका में रहकर भी सिगरेट-शराब की लत नहीं डाली."

आराम कुर्सी पर आराम से फैले सुमेर ने मुस्करा कर जवाब दिया—"लतें डालने के लिए अमरीका जाना ही तो जरूरी नहीं, यहां भी डाली जा सकती हैं!"

श्याम बाबू हो हो कर हंस पड़े.

●

स्कूल के रास्ते पर सुमेर चाचा का घर पड़ता था. आलोक नित्य ही चाचा के घर के सामने से जाता था. उस दिन सुबह-सुबह जा रहा था, तो देखा सुमेर चाचा अपनी कार धो रहे हैं.

वह गेट के पास खड़ा हो गया—"चाचा, आज आपका नौकर कहां गया?"

चाचा फिर अपनी सदा की मोहक मुस्कान में मुस्करा दिए—"अरे भई आलोक, हमारा नौकर बड़ा लाट साहब था. उसे पंद्रह रुपये महीने खाली कार धोने के कम लगते थे, सो भाग गया."

"आप कार धोने के पंद्रह देते थे? वकील साहब तो दस रुपये देते हैं," उसने आश्चर्य से पूछा.

"हां, भई, गरजमंदों को दुनिया सताती है, बेटा... तुम काम के लिए कह रहे थे. सुबह सवेरे अखबार बांटने का काम कर सकोगे? हमारा अखबारवाला बड़ा तंग करता था, तो उसी ने बताया कि वह अकेला है, काम ज्यादा है संभल नहीं पाता है. मैंने तुम्हारे लिए बात की है. तीस रुपया महीना देगा और साइकिल भी, सिर्फ काम के लिए. करोगे?"

आलोक फिर झिझक गया. उसके नाना डिप्टी कलेक्टर थे, बाबा वकील थे. कार तो नहीं, पर घर की बग्घी थी. बहुत जल्दी ही उनका देहांत हो गया था. आलोक के पिता जी भी एम.ए. हैं और कालेज में लेक्चरार हैं... एक लेक्चरार का लड़का घर घर अखबार बांटेगा! लोग क्या कहेंगे? न जाने कितने लड़के पिता जी को जानते हैं. उनकी इज्जत धूल में नहीं मिल जाएगी?

चाचा मुस्कराकर बोले—"क्यों, आलोक, क्या सोच रहे हो? मैंने उस अखबारवाले से कह भी दिया है कि मेरा भतीजा है, बड़े आदमी का लड़का है..."

आलोक चकित रह गया—"आपने बता दिया कि मैं आपका भतीजा हूं और अखबार बेचना चाहता हूं?"

"हां, बता दिया. इसमें क्या हुआ? अखबार बांटोगे, कोई भीख नहीं मांगोगे, मुफ्तखोरी नहीं करोगे... मेहनत करोगे, उसमें क्या शरम...?"

और आलोक की दृष्टि अपने जूते पर चली गई. यह जूते... हां, इन जूतों पर भी तो मेरा हक नहीं था. यह चाचा की दया का परिणाम है. पर मैं दो हाथ, दो पैर वाला हूं, अपंग नहीं जो दूसरों की दया का पात्र बनूं.

उसने अपने मन की दुविधा को निकाल फेंका—"अच्छा, चाचा, मैं कब आऊं? कब मिलवाएंगे उससे?"

"कल सुबह जरा जल्दी आ जाना. मैं मिला दूंगा."

और आलोक घर घर अखबार बांटने लगा. वह अंधेरे ही कुछ दोस्तों के साथ घूमने का बहाना कर घर से स्टेशन चला जाता, अखबार लेता और साइकिल पर घर घर बांट आता. उसे किसी से बात नहीं करनी होती. अधिकतर घरों में लोग सोते होते और वह अखबार उनके दरवाजे से फेंक आगे बढ़ जाता.

तीसरे-चौथे दिन अखबार बांटकर जब वह लौट रहा था, तो फिर चाचा को कार धोते देखा. वह खड़ा हो गया—"चाचा, आज इतनी जल्दी कार धो रहे हैं?"

"हां, आलोक, आज काम बहुत पड़ा है करने को."

"चाचा," आलोक फिर झिझक गया. चाचा ने कार धोते धोते उसे देखा और बोले—"कहो."

"चाचा आपकी कार मैं स्कूल से लौटने पर साफ कर दिया करूंगा," अचानक उसे लगा कि बड़ी मामूली-सी बात के लिए झिझक रहा है वह.

"तुम साफ करोगे? अच्छा कल से आ जाना." सुमेर चाचा तो इतनी आसानी से तैयार हो गए कि उसे आश्चर्य लगा.

आलोक को लगने लगा कि वह कई बरस बड़ा हो गया है. . .न जाने कितनी जिम्मेदारियों का एहसास होने लगा उसे. जो आलोक कभी डांटने-फटकारने से भी पढ़ने का नाम न लेता था, जो छिपा-छिपाकर परियों की, जादूगरों की कहानियां पढ़ा करता था, वह जैसे अब रहा ही नहीं. ये कहानी की पुस्तकें तो ऐसी हो गई जैसे कूड़ा-कचरा. अब वह मेहनत से पढ़ता. पढ़ने में मन भी लगाता और कहीं यह भय भी था कि यदि पढ़ने में पीछे रहा, तो बाबू जी डांट-फटकार कर सुबह का घूमना बंद करवा देंगे.

उस दिन आलोक की मासिक रिपोर्ट देखकर श्याम बाबू आलोक की मां से कह रहे थे—"सुनती हो, लगता है आलोक के सुबह घूमनवाले साथी अच्छे लड़के हैं."

"कभी लड़के के साथ तुम भी जाकर देखो न कैसे लड़के हैं. . .कहीं बुरी सोहबत में न पड़ जाए. . .फिर. . ." आलोक धक् से रह गया. दूसरे कमरे में बैठे आलोक को ऐसा लगा जैसे रगों में खून जम गया हो.

"अरे, तुम भी भली चलाती हो, बुरी सोहबत में रहने वाले लड़के फर्स्ट क्लास नंबर नहीं लाते. यह वही लड़का है जो तैंतीस नंबर भी मुश्किल से पाता था." श्याम बाबू ने जैसे समझाते हुए कहा. आलोक की जान में जान आ गई.

उसके सम्मुख वही नाटक घूम गया. महंगाई के दलदल में आकंठ डूबे बाबू जी को उसका ही आसरा है. गरीबी व कष्ट के राक्षस के दरबार में मृत बने मां-बाबू जी के पत्थरों जैसे शरीरों में प्राण फूंकने का काम उसी का है, वही तो है नन्हा राजकुमार जो राक्षस के अटपटे प्रश्नों का उत्तर देगा!

और वह फिर पुस्तक पर झुक गया.

●

उस दिन की बात जब आलोक को याद आती है, तो हंसी आ जाती है. कार साफ करने का काम शुरू किए उसे दस-पंद्रह दिन ही हुए थे कि चाचा का पुराना नौकर आ खड़ा हुआ और बड़ी ऐंठ से बोला—"एई, तुम किधर से आ गया? ये शाब का हमारा पुराना काम है. तुम अपनी छुट्टी बोलो, समझा?"

एक क्षण को आलोक को लगा उसे बीच बाजार में पीट दिया गया. यह पहाड़ी उसे भी घरेलू नौकर समझ रहा है. पर वह बिना कुछ जवाब दिए काम करता रहा. तभी हाथ में फाउंटेन पेन पकड़े सुबेर चाचा बाहर आ गए —"क्यों, धनसिंह, क्या बात है?"

"शाब, हम काम करने मांगता," उसने चाचा को फौजी अदा में सैल्यूट ठोंका.

"पर, भई, अब हमें तुम्हारी जरूरत नहीं है, जाओ."

"पर, शाब, हम इससे बढ़िया काम करने शकता है. ये छोकरा क्या करेगा?" वह अकड़कर बोला. आलोक लज्जा से जैसे गड़ गया.

"तमीज से बात करो, धनसिंह, यह मेरा भतीजा है. आलोक बेटा, आओ चलो, नाश्ता कर लो."

झगड़े का निपटारा—

मम्मी, मुझमें और डब्बू में शर्त लगी है. वह कहता है कि तुमने मिठाई अलमारी में रखी है और मैं कहता हूं कि संदूक में. जरा बताओ, तो किसकी बात सही है!

आलोक ने कार के दरवाजे बंद किए और चाचा के साथ अंदर चला गया.

पहली बार जब वह अखबारवाले से रुपये लेकर आया था, तो उसके पांव धरती पर नहीं पड़ रहे थे. तीस रुपये. . .पूरे तीस रुपये का वह मालिक था. सुबेर चाचा के पास जब आया, तो उन्होंने भी पंद्रह रुपये पकड़ाए. पर चाचा से वह रुपये कैसे ले? नहीं यह नहीं हो सकता. उसने सिर हिला दिया.

"यह तुम्हारी मेहनत के रुपये हैं, आलोक. यह तो तुम्हें लेने ही होंगे, नहीं तो कल से फिर तुम कार में हाथ भी लगा नहीं सकोगे," उन्होंने ऐसे कहा जैसे दूसरी बात सुनना चाहते ही नहीं.

"अच्छा आप जूतों के दाम काट लीजिए," उसने बड़ी झिझक में कहा.

चाचा ने एक निगाह उसे देखा और 'अच्छा' कहकर अपने काम में लग गए.

तीस रुपये उसने चाचा को ही जमा करने को दे दिए. इतने रुपये लेकर वह घर नहीं जा सकता था.

महीने पर महीने बीतते चले गए. आलोक के रुपयों की ढेरी बूंद बूंद कर बढ़ती रही. उसकी मेहनत ने और परिश्रम की सफलता के परिणाम ने उसके मन में ही उल्लास नहीं भरा था, तन पर भी अपना रंग जमाना आरंभ कर दिया था. सभी कहते—आलोक का स्वास्थ्य बहुत अच्छा हो गया है. आलोक मुस्करा देता. सुबेर

चाचा अब उसे अक्सर राजकुमार कहकर पुकारते.

आलोक पुलक से भर जाता. वार्षिक परीक्षा में प्रथम आया. श्याम बाबू गर्व से फूल उठे, बोले—"आलोक की मां, देखा? अरे, मेरा लड़का फर्स्ट आया है. . .फर्स्ट. अब मैट्रिक में पोजीशन पा जाएगा, तो उसे वजीफा मिलेगा. मालूम है. . .?"

मां मुस्करा दीं—"मुझसे क्या कहते हो. . .तुम्हीं देखो. हमेशा झींकते थे कि तुम्हारा लाड़ला नालायक निकलेगा, कहीं चपरासगीरी भी नहीं मिलेगी."

"अरे भाई, ऐसी बातें न कहता तो इसे अक्ल कहां से आती. ऐसी ही बातों से तो बच्चों के मन में ग्लानि होती है और वे कमर कसकर अखाड़े में कूद पड़ते हैं." उन्होंने इस तरह कहा जैसे आलोक की सफलता का समस्त श्रेय उन्हीं को हो.

●

गर्मियों के दिन थे. उस दिन शाम को जब आलोक मुहल्ले के लड़कों के साथ हाकी खेलकर लौटा, तो देखा मां बड़ी बदहवास-सी तांगे पर कहीं जा रही हैं. उनकी आंखों से बुरी तरह आंसू बह रहे थे. "मां. . .मां. . .क्या हुआ? कहां जा रही हो?" आलोक ने घबड़ाकर पूछा.

"बेटा," वह रो पड़ीं, "तेरे जीजा जी का ऐक्सीडेंट हो गया है, वह अस्पताल में पड़े हैं. . ."

"क्या! जीजा जी का. . .मां, बाबू जी कहां हैं?"

"बेटा, वकील साहब के यहां कुसुम का फोन आया था. उसने कहा है चार सौ पांच रुपये की सख्त जरूरत है. . . . डाक्टर आपरेशन करेंगे. . .तेरे पिता जी रुपये का इंतजाम करने गए हैं. . .पर इस समय कौन देगा. . .वैसे ही सब का कर्ज है. आ तू भी चल."

"मां, तुम चलो, मैं अभी आता हूं," कहकर वह हाकी स्टिक दरवाजे पर ही फेंक भागा. जल्दी जल्दी पड़ोस के केमिस्ट के यहां से चाचा को फोन करके पांच सौ रुपये हास्पिटल में ही लाने को कह वह किराये की साइकिल लेकर भागा. उसके आंसू रोके नहीं रुक रहे थे.

सुमेर चाचा उससे पहले ही पहुंच चुके थे. सब बुत जैसे आपरेशन थियेटर के बाहर खड़े हुए थे. कुसुम एक ओर दीवार से सिर टिकाए विक्षिप्त-सी बैठी थी अस्त-व्यस्त वेश में. दोनों आंखों से गंगाजमुना की धारें बह बह कर जैसे सूख चुकी थीं.

"दी. . .दी!" वह दीदी के पास आकर बैठ गया. कुसुम उसे कुछ क्षण को पागलों की तरह निहारती रह गई. आलोक चौंक गया. अरे, यह तो वही राजकुमारी है. जादूगर राक्षस के पिंजड़े में बंदिनी राजकुमारी. . . और उसको छुड़ाने के लिए आए सभी लोग बुत बन गए हैं. . . .

दीदी एकाएक आलोक से चिपटकर रो दी.

. . .हां, चाचा ठीक कहते थे. . .हमारे जीवन को न जाने कितने राक्षस घेरे हुए हैं. . .आलस्य विपत्ति भी एक राक्षस है. . .

तभी डाक्टर बाहर आए. सबकी उत्सुक नजरें उनकी ओर उठ गईं. . ."ही इज आउट आफ डेंजर नाऊ. . .यू कैन सी हिम. . ." (वह खतरे से बाहर हैं. आप अब उन्हें देख सकते हैं.)

बाबू जी सुमेर चाचा के दोनों हाथ दबाए बड़े करुण शब्दों में कह रहे थे—"सुमेर, इस समय तुम भगवान होकर आ गए . . .मुझे तो तुम्हारा ध्यान ही न आया था. . .चार जगह गया, पर कहीं भी रुपया न मिला. मैं एकदम तो नहीं, पर. . ."

सुमेर फिर मुस्करा उठे—"नहीं, भाई साहब, इसे लौटाने की आवश्यकता नहीं. . .यह तो आलोक. . ."

आलोक ने सहमकर चाचा को देखा. . .क्या अब भी उसके बाबू जी उसका अखबार बांटना और कार धोना सहन कर सकेंगे?

सुमेर ने बात बदल दी—"आलोक ने फोन कर दिया तभी आ गया . . ."

"हां, देखा न, इसको तुम्हारा ध्यान आया, मुझे न आया."

आलोक को लग रहा है कि वह राक्षस के भयंकर महल में खड़ा है तन कर. . .

'मैं चूहे का बच्चा नहीं शेर का बच्चा हूं. . .तुम अपने सवाल पूछो. . .'

वह देख रहा है कि राक्षस का मुख पीला पड़ता जा रहा है और वह निर्जीव होकर गिर पड़ा है. ●

१/४ संट्रल कालोनी, रेलवे लेबल कासिंग, चेंबूर, बंबई—७१.

शीर्षक प्रतियोगिता नं. ४ का परिणाम

पुरस्कार विजयी शीर्षक :

'चोर की दाढ़ी में बहीं'

प्रेषक :

ए. डी. उपाध्याय, क्वार्टर नं. १, सोहन कोठी, बीकानेर (राज.)

शीर्षक प्रतियोगिता–६

पुस्तकालय
पु० सं० ३२१
बिजनौर

छाया : मौलिक वजू कोटक

इस चित्र का शीर्षक बताइए

ऊपर के चित्र को देखिए और जरा सोचकर एक बढ़िया और फबकता हुआ शीर्षक बताइए. अपने उत्तर एक सबसे अलग पोस्ट कार्ड पर लिखकर हमें २० अगस्त तक भेज दीजिए. सबसे बढ़िया शीर्षक पर दस रुपए के मूल्य की पुस्तकें पुरस्कार में मिलेंगी. हां कार्ड पर अपना नाम और पता लिखना मत भूलिए. शीर्षक के कार्ड इस पते पर भेजिए : संपादक, 'पराग (शीर्षक प्रतियोगिता-६), पो. बा. नं. २१३, टाइम्स आफ इंडिया, बंबई-१

बहुत काम करने रहते

सवेरे सवेरे

जब तक नकली जबाड़ा न चढ़े,
मुँह में ही ब्रश करना पड़ता है!

भले ही दाढ़ी पेट में हो,
बनानी तो पड़ती ही है!

न जाने वाश-बेसिन आसमान
पर क्यों लगाया जाता है!

जो सवाल टीचर जी को नहीं आते
वे हमें घर पर करने पड़ते हैं!

प्लेट में चाय, प्याला ज़मीन
पर—बेकार के कामों में
बिज़ी रहने का तरीका!

बिजनौर

• फोटो : एस. सी. शर्मा

यह सब सवाल ही सवाल था
असल में आज तो छुट्टी है!

जब तक बस पर टाटा न हो,
स्कूल जाने का मजा ही क्या?

छोटू और लंबू
स्वाधीनता दिवस के सिलसिले में आज आचार्य जी का भाषण है!
यार, आचार्य जी को इतना मान क्यों दिया जाता है?
अरे भाई, वह माने हुए नेता हैं. स्वतंत्रता-संग्राम के दिनों में अंग्रेजों की जेल काट चुके हैं!
वह भारा! लंबू, याद करो उन दिनों हम भी जेल में थे!
अरे, हां!
चलो आचार्य जी से मिलें!
और फिर....
अरे हां, भई, तुम लोग तो जेल में मुझसे मिले थे. शायद तुम को भी सजा हुई थी!

मुझे आप लोगों से मिलकर बड़ी प्रसन्नता हुई! मैं उस क्लब का सचिव हूं जो भूले-बिसरे स्वतंत्रता संग्रामियों की तलाश कर के उन्हें सम्मानित करता है!
आप लोग कल इस पते पर आ जाइए, आप के सम्मान में एक सभा होगी और एक टी पार्टी!
दूसरे दिन सभा हुई और पार्टी भी...
हैरत है कि देश ने हमें मान देने में इतनी देर क्यों की!
महोदय जी, वह कौन-सा कारनामा है जिस पर अंग्रेजों ने आप को जेल भेजा था?
अरे साहब, हम लोग बिलकुल बेकसूर थे! बात केवल इतनी थी कि पतंगबाजी की एक प्रतियोगिता में हम भयंकर संग्राम कर बैठे थे, इसी लिए हफ्ते भर की जेल हो गई थी!
क्लब
दूर हो जाओ!
मर गए, अरे यह मान देते देते अपमान कैसा?

अनिलकुमार, लैंसडाउन :
छोटू व लंबू हमेशा नीले और लाल कपड़े ही पहनकर क्यों आते हैं? क्या उनके पास और कपड़े नहीं हैं?
अगर और कपड़े पहन लें, तो तुम लोगों में से उन्हें अलग कैसे किया जाए?

मिश्री शाह, कुमारधुबी :
'सिर-आंखों पर' भला कैसे बैठाया जाता है?
उन्हें गंदा रख कर—मक्खियां अपने आप बैठेंगी!

ज्ञानचंद्र सिंघी, कटिहार :
जबान पर ताले लगाने की नौबत कब आती है?
जब उसका स्वत:चालित टेप-रिकार्डर मौके-बेमौके चल पड़ता है!

उमाशंकर सिंह 'ध्यानी', हवड़ा :
स्वप्न हमारी समस्याओं का समाधान कैसे कर सकते हैं?
नेता बनकर!

शशि आनंद, चंडीगढ़ :
गाड़ी के चलने तथा जबान के चलने में क्या अंतर है?
पहली सड़क पर चलना पसंद करती है, दूसरी ऊबड़खाबड़ में!

आरती सिंह, डोली :
मधुमक्खियां उपकार में मधु देती हैं, और काटती भी हैं—ऐसा क्यों?
क्योंकि डाक्टर मीठी दवाई भी देते हैं—और इंजेक्शन भी!

चंद्रकुमार, दिल्ली :
जिंदगी और मौत में कितना अंतर है?
जहां तक रबड़ खिंचे!

अशोककुमार सोफ्ता, श्रीकरणपुर :
फूल कांटों में रहकर भी क्यों मुसकराता रहता है?
क्योंकि तुम उसे देखकर मुसकराते हो!

कमला सिंह, कानपुर :
लड़के और लड़की एक ही समान पैदा होते हैं, किंतु बड़े होनेपर लड़कों के गालों पर बाल उग आते हैं, लड़कियों के क्यों नहीं?
जिनके पास उत्तम वस्तुओं का अभाव हो, उनको पीड़ा को कुरेदना नहीं चाहिए!

सुभाषचंद्र शर्मा, श्रीमनगर :
अगर कोई मूर्ख समझदारी की बात करे, तो क्या समझना चाहिए?
उत्तर भी मिल ही जाता है!

दीपक राज परदेशी, बेलगांव :
यदि कोई मक्खीमार शेर मारने निकले, तो?
शेर को मक्खी मारने से छुट्टी मिल जाए!

नवनीतकुमार आर. शाह, नेरल (कुलाबा) :
यौवन आने पर और अधिकार पाने पर किस बात का ध्यान रखना चाहिए?
म्यान में रहने का!

उमेशचंद्र शा, कानपुर :
क्या दिल के रंग का चेहरे के रंग से कोई संबंध है?
अभी तेल-फुलेल बनाने वाली कंपनियों ने दिल का रंग बनाया ही नहीं!

सुरेंद्र मक्कोजा पंजाबी, बिलासपुर :
जब कोई गल्ती होती है, तो कहा जाता है कि 'कान पकड़ो'—नाक पकड़ने लिए क्यों नहीं कहा जाता?
सुना नहीं? नाक पकड़ते दम निकले!

बृजमोहनप्रसाद, मुजफ्फरपुर :
कहावत है : 'सिर बड़ा सरदार का, पैर बड़ा गंवार का'; जिसके दोनों ही बड़े हों, उसे क्या कहेंगे?
सरकार!

एस. के. शा, रानीगंज (बर्दवान) :
यदि बधाई देने से लोग हजारों साल जीने लगें, तो?
वोट देने वालों की तरह बधाई देने वालों को भी पांचों घी में और सिर कढ़ाई में हो!

बच्चों के अटपटे प्रश्नों के चटपटे उत्तर हम इस स्तंभ में छापते हैं. जिनके प्रश्न अधिक अटपटे होंगे, उन्हें सुंदर-से पुरस्कार मिलेंगे. जिन्हें पुरस्कार मिले हैं उनके नाम के पहले ★ का निशान लगा है. प्रश्न कार्ड पर ही भेजो और एक बार में तीन से ज्यादा मत भेजो. इस स्तंभ में पहेलियों के उत्तर नहीं दिए जाएंगे. पता याद कर लो : संपादक, 'पराग (अटपटे-चटपटे)', पो. बा. नं. २१३, टाइम्स आफ इंडिया बिल्डिंग, बंबई-१.

सुरेशचंद्र गोस्वामी, जयपुर :
आखिर सब मनुष्य स्वर्ग ही जाना क्यों पसंद करते हैं?
दिवंगत नेताओं के दर्शन के लिए, जो भी मिले!

अवनींद्र मिश्र, नेपानगर :
मनुष्य के सिर के बाल वृद्धावस्था में ही क्यों सफेद होते हैं—बचपन में क्यों नहीं?
उन पर पर्याप्त धूप न पड़ने के कारण!

अशोककुमार शर्मा, भिलाई नगर :
काले रंग से नफरत और काले धन से खुशी क्यों होती है?
तभी जब धन अपना हो और रंग पराया!

मोहम्मद इस्लाम फारुकी, श्रीक्षेत्र माहूर :
यदि सचे गुलगुले खाने लगें, तो?
प्रेम से खाओ, कोई हरज नहीं!

दुलीचंद बांठिया, नागौर :
आजकल भारतवर्ष में सबसे ज्यादा उत्पादन किस चीज का हो रहा है?
जूतों का!

विनेशचंद्र पुरोहित, गंगरार :
जो लोग धर्म की दुहाई देकर देश के टुकड़े टुकड़े कराने में नहीं हिचकते हैं, उन्हें क्या कहना चाहिए?
सच के साथ टुकड़े करके खाने वाले!

विवेकानंद मिश्र, गोरखपुर :
इनसान ईमान कब बेचता है?
जब उसे उसकी मनचाही कीमत मिल जाती है!

रामशरण दास, सिरसा :
गधा आदमी कब बनता है?
जब उसे अपने प्रश्न का उत्तर समझ में आ जाता है!

राकेशकुमार त्रिवेदी, रायपुर :
जब पानी खौलता है तब भाप बनता है, जब खून खौलता है, तब?
इंजन पटरी से उतरकर चलने लगता है!

कैलाशचंद्र जैन, सीकर :
यदि इस पृथ्वी पर 'राम-अवतार' न होता, तो वाल्मीकि की रामायण का क्या होता?
वाल्मीकि जी को ही क्या पड़ी थी—वह भी न होते!

अखिलेशकुमार त्रिगुणायत, मुरादाबाद :
'लेडीज फर्स्ट' की बात तो ठीक है, पर मुखपृष्ठ पर लड़कों से इस वर्ष क्यों नाराजी है?
शीशे में देख लेना ही काफी है!

रमेशसिंह तोमर, अम्बाह :
ऐसी कौन-सी चीज है, जो दूसरों को देने पर भी पास रहती है?
थप्पड़!

प्रकाशचंद्र चंद्रभान, बंबई :
यदि गलत बात पर बहुमत हो, तो सच्चाई कैसे प्रकट की जा सकती है?
अखबार में छपवाकर!

कुमारी सरिता श्रीवास्तव, फैजाबाद :
प्रत्येक की बुद्धि का विकास समान क्यों नहीं?
क्योंकि गाड़ी सिर्फ गाड़ीवान से नहीं चलती—बैल भी चाहिए ही!

इनायतउल्ला खान, बिलासपुर :
वैज्ञानिकों ने तो चांद की पोल ही खोल कर रख दी. अब सुंदर मुखड़े की काहे से उपमा दें?
पोल तो सुंदर मुखड़े की भी खुल जाती है!

★ **चंद्रभान सिंघी, द्वारा साधूराम एंड कंपनी, बीज-व्यापारी, भरतीपुर रोड, जबलपुर :**
जब दुश्मनी हद से ज्यादा बढ़ जाती है, तो क्या होता है?
संयुक्त राष्ट्र संघ में फरियाद!
मजबूरियां दूर करने का अचूक उपाय क्या है?
मजदूरियां!
खुशी का 'राग' कब गाना चाहिए?
जब सुनने वालों के कान बंद हों!

★ **रीता खंडेलवाल, एल–१५।८०, सोरो कटरा, आगरा–२ :**
जब किसी वस्तु पर दबाव पड़ता है, तो वह पिचक जाती है, परंतु गाल पर चपत पड़ता है, तो वह फूल क्यों जाता है?
अत्यधिक प्रसन्नता के कारण!

एक चटपटा एकांकी

पहला दृश्य

(मंच पर एक मध्यम श्रेणी का कमरा. बीच में एक मेज. मेज के इर्दगिर्द चंद कुर्सियां. एक कुर्सी पर अजरा, दूसरी पर फरीदा और उसके सामने की कुर्सी पर तहसीन बैठा है. मेज के ऊपर एक डिब्बा पड़ा है.

जिस वक्त पर्दा उठता है, अजरा अपने मुंह में लड्डू डाल रही है, तहसीन के हाथ में लड्डू दिखाई दे रहा है और फरीदा का मुंह हिल रहा है, जिसका मतलब यह है कि वह लड्डू मुंह में डालकर खा रही है.)

फरीदा (लड्डू निगलते हुए) : तहसीन!

तहसीन : क्यों, फरीदा?

फरीदा : खाते क्यों नहीं, हाथ में लड्डू पकड़े क्यों बैठे हो?

तहसीन : खा लेता हूं.

फरीदा : यह आखिरी लड्डू है ना?

तहसीन : पांचवां है.

अजरा : आखिरी हुआ ना! पांच पांच लड्डू ही तो मिले थे हरेक को!

तहसीन : अज्जू बाजी!

अजरा : क्या है?

तहसीन : तुमने सारे के सारे खा लिये हैं?

अजरा : और क्या करती? अम्मी ने रखने के लिए तो नहीं दिए थे!

फरीदा : नगमा ने तो एक भी नहीं खाया होगा.

अजरा : उसके पास तो कम से कम सात रोज तक पड़े रहेंगे. फिर हर रोज एक लड्डू खाएगी...

तहसीन : और हमें तरसाएगी!

अजरा : उसकी तो आदत है कि हमें दिखा-दिखाकर मिठाई खाए.

फरीदा : हम हर चीज झटपट खा लेते हैं. और फिर वह हमें दिखा-दिखाकर खाती है.

अजरा : अम्मी भी तो उससे बड़ी खुश हैं.

फरीदा : और हमें कहती हैं कि तुम तीनों भुक्खे हो, नदीदे हो. इधर चीज हाथ में आई और उधर पहुंची पेट में! क्या मजाल जो सब्र से काम लो. तौबा, क्या नदीदापन है! चटोरे कहीं के!

अजरा : लड्डू देते हुए भी तो अम्मी ने कहा था—तुम लोग फौरन निगल जाओगे और मेरी नगमा, देखना, कैसे सलीके और कायदे से खाएगी!

लड्डुओं का स्वाद और सोने की गेंद

फरीदा : हूं! बड़े कायदे और सलीके से खाती है!

तहसीन : और जब खाती है,तो हमें मुस्करा-मुस्करा-कर देखती भी जाती है.

फरीदा : और अम्मी कहा करती हैं—देखो, अच्छे बच्चे यों सब्र के साथ चीजें खाया करते हैं!

तहसीन : मेरा तो जी चाहता है कि यह नगमा की बच्ची जहां अपनी चीज रखे, वहां से चुपचाप उठाकर खा लिया करूं!

फरीदा : तौबा करो, तहसीन, बड़ी चालाक है यह नगमा बानो!

अजरा : चालाक तो बड़ी है. . . पर किसी दिन ऐसा सबक दूंगी उसे कि याद रखेगी हमेशा!

तहसीन : सबक क्या दोगी, अज्जू बाजी?

अजरा : सबक क्या दूंगी. . . हां, यह तो मैंने सोचा ही नहीं अभी.

फरीदा : सबक दोगी. . . खाक भी नहीं दे सकती तुम!

अजरा : मैं उससे ज्यादा चालाक हूं.

फरीदा : जानती हूं जैसी चालाक हो तुम! उस दिन कितनी खुशामद से कहा था उससे—प्यारी बहन नगमा, मेरा मुंह कड़वा हो गया है, थोड़ी-सी खीर तो दे दो. और वह हंस पड़ी थी!

तहसीन : सिर्फ हंस पड़ी थी? कहा नहीं था उसने—मैं जानती हूं तुम्हारी मक्कारी!

—— मिर्ज़ा अदीब ——

फरीदा : और अज्जू मुंह देखती ही रह गई थी!

तहसीन : याद है, बाजी?

अजरा : बड़ी चालाक बनी फिरती है! अभी मेरे हाथ नहीं देखे हैं उसने!

फरीदा : तो दिखा दो हाथ, सोच क्या रही हो!

तहसीन : फरीदा, बाजी उसका कुछ नहीं बिगाड़ सकती.

अजरा : अगर ऐसा चक्कर दे दूं कि वह हैरान-परेशान हो जाए, तो फिर क्या कहोगे, तहसीन?

तहसीन : ऐसा हो ही नहीं सकता. जब तक कितनी बार तुमने और फरीदा ने उसे बनाने की कोशिश की है, मगर आज तक वह किसी के धोखे में नहीं आई, बल्कि उल्टा तुम्हारा मजाक बनाया जाता रहा है.

अजरा : सच्ची बात यह है कि मैंने आज तक उसे चक्कर देने की कोशिश ही नहीं की, वर्ना उसकी क्या मजाल जो बच के निकल जाए!

फरीदा : अजरा, छोड़ो यह बात.

तहसीन : हां, बाजी, तुम उसे कभी. . . कभी नहीं बना सकती.

अजरा (गुस्से से पांव जमीन पर मार कर) : गलत!

फरीदा : अजरा, खुदा के लिए कमरे का फर्श तो न तोड़ो!

तहसीन : बाजी, एक बार और इसी तरह फर्श पर पांव मारा, तो भूचाल आ जाएगा सचमुच! दीवारें गिर पड़ेंगी!

फरीदा : बल्कि छत भी गिर पड़ेगी!

(अजरा सिर झुकाए कमरे में टहलने लगती है.)

तहसीन : बाजी को बड़ा गुस्सा आ गया है!

फरीदा (होंठों पर उंगली रखते हुए) : खामोश!

तहसीन : इन्हें क्या हुआ है?

फरीदा : सोच रही हैं; देखते नहीं, किस तरह सिर झुकाकर टहल रही हैं!

तहसीन : क्या सोच रही हैं?

फरीदा : मैं क्या जानूं!

(अजरा उनकी तरफ आती है.)

अजरा : नगमा है कहां?

फरीदा : अपने कमरे में है, और कहां होगी?

अजरा : अगर आज उससे पांचों के पांचों लड्डू ले आऊं, तो फिर मान जाओगी ना?

फरीदा और तहसीन (एक साथ) : हां!

अजरा : तो रात होने दो.

फरीदा : शाम तो हो चुकी है!

अजरा : थोड़ी देर ठहर जाओ, फिर देखना, होता क्या है!

तहसीन : क्या होगा?

अजरा : देख लोगे अपनी आंखों के सामने.

तहसीन : क्या देख लेंगे?

अजरा : यह नहीं बताऊंगी अभी. वह चक्कर चलाऊंगी, वह चक्कर चलाऊंगी कि हंस-हंसकर तुम्हारे

पट में बल पड़ जाएंगे.

तहसीन : अच्छा!

अजरा : और वह नगमा. . . उस बेचारी का क्या हाल होगा, यह भी देख लोगे.

फरीदा : रो पड़ेगी!

अजरा : इतनी हैरान-परेशान होगी कि. . .कि. . . कि. . .

फरीदा : बस, अजरा, बस! देखते हैं क्या करती हो!

अजरा : अगर नगमा ने अपनी खुशी से पांचों लड्डू मेरे हवाले कर दिए, तो?

फरीदा : मैं बाजार से पांच लड्डू खरीदकर तुम्हारे हवाले कर दूंगी.

तहसीन : और मैं भी बाजी को पांच लड्डू दूंगा.

अजरा : तो अब मुझे अपना काम करने दो . . .!

(अजरा जल्दी से कमरे से निकल जाती है और पर्दा गिरता है.)

दूसरा दृश्य

(नगमा का कमरा. नगमा कोच में धंसी हुई किसी पुस्तक के अध्ययन में लीन है. कोच के पास एक तिपाई के ऊपर टेबुल लैंप जल रहा है. इर्दगिर्द अंधेरा है. दरवाजे पर दस्तक होती है.)

नगमा (आप ही आप) : पता नहीं कौन है? (ऊंची आवाज में) कौन है?

आवाज : मैं हूं.

नगमा (आप ही आप) : किसकी आवाज है? अम्मी की तो नहीं है (जोर से) कौन हो, बताओ ना?

आवाज : मैं हूं. . .जरा दरवाजा खोलो. . .

नगमा (उठती हुई) : खुदा जाने कौन है! खैर, देखती हूं दरवाजा खोलकर. (जोर से) . .अच्छा!

(नगमा कोच से उठती है. दरवाजे की तरफ जाती है. दरवाजा खोलती है. सामने हल्के अंधेरे में शाल में लिपटी हुई कोई बूढ़ी औरत दिखाई देती है. सिर्फ उसका चेहरा दिखाई दे रहा है. नगमा उसे देखती है और चुपचाप खड़ी रहती है.)

बुढ़िया : अच्छी लड़की!

नगमा : जी, आप कौन हैं?

बुढ़िया : अभी बताती हूं. क्या मैं तुम्हारे कमरे में आकर बैठ सकती हूं?

नगमा : काम क्या है आपको?

बुढ़िया : मैंने सुना है अच्छी लड़कियां मेहमानों के साथ बड़ा अच्छा सलूक करती हैं.

नगमा : अम्मी को बुलाती हूं.

बुढ़िया : पर मैं तो तुम्हारी मेहमान हूं, तुम्हारी अम्मी की नहीं!

नगमा : मेरी मेहमान?

बुढ़िया : हां, अच्छी लड़की!

नगमा : मगर आपको मुझसे क्या काम हो सकता है?

बुढ़िया : यहीं दरवाजे पर बता दूं?

नगमा : अच्छा, तशरीफ रखिए.

(नगमा पीछे हटती है. बुढ़िया आहिस्ता आहिस्ता आगे बढ़ती है और कोच पर एक कोने में बैठ जाती है.)

बुढ़िया : क्या पढ़ा जा रहा है?

नगमा : इम्तिहान करीब है, तैयारी कर रही हूं.

बुढ़िया : तुम तो हमेशा क्लास में अव्वल रहती हो. शाबाश, अच्छी बच्चियां इसी तरह इज्जत हासिल करती हैं!

(नगमा घबरा-सी जाती है.)

बुढ़िया : घबराती क्यों हो, लड़की?

नगमा : जी नहीं, मगर आप. . .

बुढ़िया : इसलिए घबरा रही हो कि नहीं जानती मैं कौन हूं.

नगमा : जी. . . क्या अर्ज करूं. . .

बुढ़िया : . . .कि तुम्हारा नाम क्या है. . . लेकिन मैं तो जानती हूं तुम्हारा नाम नगमा है!

नगमा : आप मेरा नाम जानती हैं!

बुढ़िया : क्या तुम्हारा नाम नगमा नहीं है?

नगमा : जी. . . मेरा यही नाम है. . .

बुढ़िया : मैं परीलोक से आई हूं.

नगमा : परीलोक से! . . . तो आप. . .

बुढ़िया : मैं परी हूं!

नगमा : आप परी हैं. . .! मगर आप तो बूढ़ी हैं!

बुढ़िया : वाह, क्या बात कही है! परियां बूढ़ी नहीं होतीं, हमेशा जवान ही रहती हैं!

नगमा : मुझे खबर नहीं थी इसकी.

बुढ़िया : तुमने अपनी किताबों में सौलम परी, स्वर्ण परी, हीरा परी की कहानियां पढ़ी होंगी. वे अब बूढ़ी हो चुकी हैं और उन्हीं में से शायद एक मैं हूं.

नगमा : आप?

बुढ़िया : हां, नगमा.

नगमा : आप कौन हैं?

बुढ़िया : मैंने बताया नहीं कि परी लोक से आई हूं.

नगमा : आप परी हैं. . . मगर मैंने पूछा यह है कि जिन परियों के आपने नाम लिये हैं उनमें आप कौन हैं?

बुढ़िया : हीरा परी.

नगमा : हीरा परी की मैंने कोई कहानी नहीं पढ़ी.

बुढ़िया : इसकी वजह यह है कि अभी तुमने कई परियों की कहानियां नहीं पढ़ीं. किसी दिन पढ़ लोगी. अच्छा, अब मैं तुम्हें बताती हूं कि आज की रात मैं परी-लोक से निकलकर तुम्हारे पास क्यों आई हूं. उफ! तुम्हारे देश में बड़ी सर्दी है!

नगमा : हीटर ले आऊं दूसरे कमरे से?

बुढ़िया : रहने दो, बेकार किसी के आराम में खलल डालोगी. यह शाल तो ओढ़ ही रखा है. जानती हो यह शाल किसका है?

नगमा : जी, नहीं.

बुढ़िया : एक दफा तुम्हारे मुल्क के किसी हिस्से से एक औरत हमारे मुल्क में आ गई थी. पता नहीं किस तरह आ गई थी. . . पर आ गई थी और मेरी सहेली

बन गई थी. यह शाल उसने मुझे दिया था.

नगमा : अच्छा!

बुढ़िया : हमारे परीलोक में तो सर्दी बिल्कुल नहीं होती.

नगमा : तो आप आई क्यों हैं?

बुढ़िया : बात यह है, नगमा, परीलोक की रानी को इंसानी बच्चों से बड़ा प्यार है. खास तौर पर वह उन बच्चियों को बेहद पसंद करती है जो बहुत अच्छी और नेक होती हैं, खूब मेहनत करती हैं और इज्जत हासिल करती हैं. समझ लिया ना?

नगमा : जी, हां.

बुढ़िया : तो हमारी रानी हर साल के शुरू में ऐसी बच्चियों को परीलोक से कुछ तोहफे भिजवाती है.

नगमा : अच्छा!

बुढ़िया : हां, छह-सात परियों को छह-सात तोहफे दिए जाते हैं और उनसे कहा जाता है कि जिन इंसानी बच्चियों ने साल भर में बड़ा नाम पैदा किया हो, उन्हें ये तोहफे दे आओ. मुझे भी इस बार एक तोहफा मिला है.

नगमा : एक तोहफा मिला है!

बुढ़िया : और वह तोहफा मैं तुम्हारे लिए लाई हूं.

नगमा : मेरे लिए?

बुढ़िया : हां, नगमा!

नगमा : वाकई?

बुढ़िया : परियां कभी झूठ नहीं बोला करतीं!

नगमा : तो आपको कैसे पता चला कि मैं इम्तिहान में अव्वल रहती हूं?

बुढ़िया : परीलोक की कुछ परियां तुम्हारे मुल्क में घूमती रहती हैं और अच्छी बच्चियों के बारे में जानकारी हासिल करती रहती हैं.

नगमा : तो परीलोक की रानी ने मुझे तोहफा भेजा है!

बुढ़िया : और तोहफा है सोने की एक गेंद!

नगमा : सोने की गेंद?

बुढ़िया : यह रही.

(बुढ़िया शाल से अपना हाथ बाहर निकालती है. उसमें एक संदूकची है जिसमें ताला लगा है.)

नगमा : गेंद. . . सोने की गेंद. . . वाह वाह!

बुढ़िया : गेंद इसके अंदर है. और यह लो चाबी.

नगमा : शुक्रिया. . . बहुत बहुत शुक्रिया!

बुढ़िया : मैं तुम्हारा शुक्रिया अपनी रानी तक पहुंचा दूंगी. अब मैं जाती हूं.

नगमा : मैंने आपकी खातिर कुछ तो की ही नहीं.

बुढ़िया : शुक्रिया, नगमा!. . . हां, एक बात है. . .

नगमा : फरमाइए.

बुढ़िया : परीलोक में भी नन्ही बच्चियां होती हैं जो इंसानी बच्चों से कोई तोहफा पाकर बेहद खुश होती हैं.

नगमा : तो मैं क्या पेश करूं. . . इस वक्त मेरे पास कुछ है नहीं . . .

बुढ़िया : परसों एक परी जब वापस परीलोक में गई थी तो एक बच्ची की तरफ से कुछ मिठाई ले गई थी.

नगमा : परियां मिठाई खाती हैं?

बुढ़िया : बहुत शौक से, बड़े मजे से!

नगमा : अच्छा तो, मेरे पास इस वक्त पांच लड्डू हैं.

बुढ़िया : लड्डू. . . सुना है यह मिठाई बड़ी मजेदार होती है.

नगमा : मैं ये लड्डू दे दूं नन्ही परियों को?

बुढ़िया : हां, मैं उन्हें नन्ही परियों को दे दूंगी.

नगमा : तो ठहरिए जरा, मैं अभी लौटकर आती हूं.

(नगमा अंधेरे में तेजी के साथ कमरे से निकल जाती है. बुढ़िया शाल ठीक करती है. कुछ पलों बाद नगमा लौट कर आती है. उसके हाथ में एक डिब्बा है.)

बुढ़िया : वाह वा! वे तो खुश हो जाएंगी!

नगमा : खुदा करे ऐसा हो!

(बुढ़िया डिब्बा हाथ में ले लेती है और उठती है.)

बुढ़िया (चलते हुए) : वह गेंद देख लो ना!

नगमा : अच्छा . . .

(नगमा चाबी से संदूकची खोलती है और उसमें से एक मामूली गेंद निकालती है. तभी दरवाजे से फरीदा और तहसीन हंसते हुए आते हैं. बुढ़िया शाल उतार देती है. अब वह अजरा है. नगमा इस तरह इन्हें देखती है जैसे हैरान हो गई है.)

अजरा (अपनी असली आवाज में) : क्यों कैसा चक्कर दिया है!

तहसीन : बाजी अज्जू, आज तुम्हें उस्ताद मान लिया मैंने!

फरीदा : नहीं, उस्तादों की उस्ताद! अजरा, कमाल कर दिया तुमने!

नगमा : लड्डू लेना चाहती थीं तो मांग लेतीं. मैं दे देती. इस तरह धोखा क्यों दिया मुझे?

अजरा : मजा तो इसी तरह लेने में है. **(जीत की खुशी में ललकार)** अभी दस लड्डू और मिलेंगे मुझे!

तहसीन : नगमा, सोने की गेंद कैसी है?

फरीदा : वाह वा! क्या गेंद है? परीलोक से आई है!

अजरा : परीलोक की रानी ने भेजी है!

(तीनों जोर जोर से कहकहे लगाते हैं. नगमा हैरान-परेशान दिखाई देती है.)

तहसीन : अज्जू बाजी, निकालो लड्डू.

फरीदा : इसके सामने खाते हैं!

अजरा : क्यों नहीं!

(अजरा डिब्बा खोलती है. उसके चेहरे का रंग बदल जाता है.)

फरीदा : अरे, इसमें तो कोयले हैं!

तहसीन : कोयले?

नगमा (मुस्कराकर) : आदाब अर्ज है, जनाब! खाइए लड्डू, शौक से खाइए! नगमा को धोखा देना आसान नहीं है. खाइए लड्डू, बड़े मजेदार हैं! ही-ही-ही... हा-हा-हा. . .

(नगमा कहकहा लगाती है. तहसीन, अजरा और फरीदा हैरान-परेशान खड़े हैं और पर्दा गिर जाता है.) ●

(उर्दू से अनुवाद : किशोरीरमण टंडन)

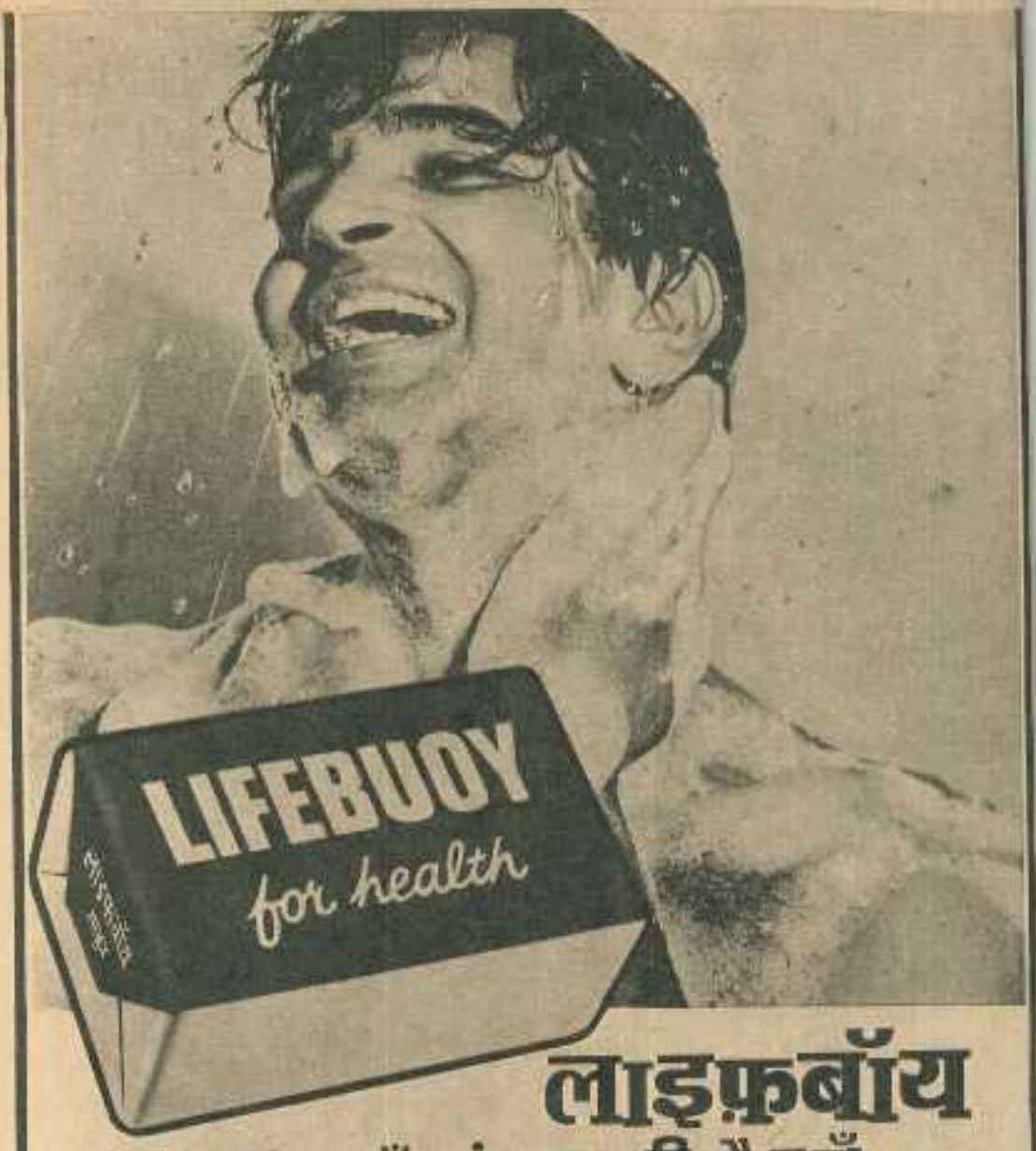

लाइफ़बॉय

है जहाँ तंदुरुस्ती है वहाँ

स्नान का आनन्द उठाइए, लाइफ़बॉय साबुन से नहाइए। चुस्ती और ताज़गी, तंदुरुस्ती और ताज़गी...यह है लाइफ़बॉय का स्फूर्ति-दायक आनन्द, क्योंकि इस में एक श्रेष्ठ साबुन की श्रेष्ठता भी है और अपनी अद्‌भुत विशेषता भी...

लाइफ़बॉय मैल में छिपे कीटाणुओं को धो डालता है

हिंदुस्तान लीवर का उत्पादन

लिटास-L 58-140 HI

कहानी—

कंजूस का धन

बहुत समय पहले की बात है. किसी नगर में एक आदमी रहता था. उसके पास रुपया-पैसा तो बहुत था, लेकिन वह पल्ले सिरे का कंजूस था. अपनी कंजूसी के कारण न तो वह अच्छी तरह खाता-पीता ही था और न अच्छे अच्छे कपड़े पहनता था. उसकी वेश-भूषा देखकर कोई यह अनुमान नहीं लगा सकता था कि उसके पास इतने पैसे हैं. लोग उसका खूब मजाक उड़ाते थे और उसको कंजूस, मक्खीचूस आदि नामों से पुकारा करते थे, लेकिन उसको किसी की परवाह नहीं थी.

जब उसके पास काफी रुपये हो गए, तो उसको रात-दिन यह चिंता सताने लगी कि कहीं कोई चोर आकर उन रुपयों को चुराकर न ले जाए. उसने सोचा—कोई ऐसा उपाय करना चाहिए जिससे चोर उसकी इतनी मेहनत से जोड़ी हुई रकम को लेकर चंपत न हो जाए. काफी सोचने-विचारने के बाद एक उपाय उसकी समझ में आया.

उसने अपने सारे धन के बदले में सोने की एक ईंट खरीद ली और रात के समय जब सब सो रहे थे, तो चुपके से उस ईंट को अपने घर के पिछवाड़े एक पेड़ के नीचे गाड़ दिया.

यद्यपि जिस समय उसने ईंट को गाड़ा था, उस समय उसने चारों तरफ अच्छी तरह निगाह दौड़ा ली थी कि कहीं उसको कोई ऐसा करते हुए देख तो नहीं रहा है. और जब उसको पूरा भरोसा हो गया था कि कोई नहीं देख रहा है, तभी उसने ईंट को गाड़ा था, फिर भी उसको यह चिंता हरदम लगी रहती थी कि शायद किसी ने देख लिया हो और वह किसी समय चुपके से उसको निकालकर न ले जाए. इसलिए वह रोज रात को आकर उस ईंट को बाहर निकालता और अच्छी तरह संभालकर वापस गाड़ देता. इस प्रकार कई दिन बीत गए.

एक रात को जब वह उस ईंट को निकालकर देख रहा था, तो वहां से थोड़ी दूर पर ही कोई चोर छिपा हुआ खड़ा था. उसने उस ईंट को देख लिया. फिर क्या था, जैसे ही वह कंजूस उसको वहां गाड़कर वापस गया, वह चोर उस ईंट को निकालकर अपने घर ले गया.

दूसरी रात जब कंजूस फिर उस ईंट को संभालने आया, तो वह उसको वहां से गायब मिली. यह देखकर कंजूस सिर पीटकर रोने लगा. उसके रोने की आवाज सुनकर आसपास से कई आदमी दौड़े हुए आए और उससे पूछा—"क्यों, क्या बात है, क्यों रो रहे हो?"

कंजूस ने सारा किस्सा कह सुनाया. उसकी सारी कहानी सुनकर भीड़ में से एक आदमी बाहर निकलकर आया और कंजूस के हाथ में मिट्टी से बनी हुई एक ईंट थमाते हुए बोला—"रोओ मत. लो, इस ईंट को उसी जगह पर गाड़ दो."

कंजूस ने उस आदमी की बात सुनकर बड़े दुःख से कहा—"तुम क्यों जले पर नमक छिड़क रहे हो? मैं इस मिट्टी की ईंट को गाड़कर क्या करूंगा?"

इसपर उस आदमी ने कहा—"मैंने तो तुम्हें ठीक उपाय बतलाया, क्योंकि तुम्हारे लिए तो जैसी वह सोने की ईंट थी, वैसी यह भी होगी. जब तुम धन का कोई उपयोग ही नहीं करते और उसे जमीन में गाड़कर रखते हो, तो उससे न तो तुम्हें कुछ लाभ होता है और न किसी और को ही कोई लाभ होता है. फिर जैसी वह मिट्टी की ईंट वैसी ही सोने की ईंट! तुम्हें क्या फर्क पड़ा?"

यह सुनकर वह कंजूस बड़ा शर्मिंदा हुआ और फिर उसने कंजूसी करना सदा के लिए छोड़ दिया.

—विश्वनाथ गुप्त

सेकसरिया शुगर मिल्स प्रा. लि., बभनान, बस्ती (उ. प्र.)

टीका-टिप्पणी की कहानी

टी. बी. का टीका

दादा जी घर से बाहर निकले, तो उन्होंने देखा कि एक सूट-बूट पहने अच्छे-भले आदमी को मधु की मम्मी, बबली के डैडी, शुभू की दादी और दो-चार जने और घेरे खड़े हैं. दादा जी भी वहां जा पहुंचे. उन्हें आते देखकर सब एक एक कदम पीछे हट गए.

"क्या बात है?" दादा जी ने बिना किसी को संबोधित किए पूछा.

"जी, यह टीका लगाने वाले डाक्टर हैं," मधु की मम्मी ने उत्तर दिया.

आगे डाक्टर स्वयं ही बोल पड़ा—"मैं बच्चों को टी. बी. का टीका लगाने आया हूं."

"क्या शहर में टी. बी. फैल रही है?" दादा जी ने घबराकर पूछा.

डाक्टर ने कहा—"नहीं, टी. बी. तो नहीं फैली है. फिर भी सुरक्षा के लिहाज से सात वर्ष में एक बार टी. बी. का टीका लगवा लेना जरूरी है, विशेष तौर पर बच्चों को."

"निरोग बच्चों पर दवाई नष्ट करने से क्या लाभ?" दादा जी ने पूछा.

फिर डाक्टर और दादा जी में बातें होने लगीं. तीन मिनिट में ही डाक्टर ने दादा जी को विश्वास दिला दिया कि बच्चों के स्वास्थ्य के लिए टीके से बढ़कर उत्तम वस्तु दुनिया में अभी तक नहीं बनी है. दादा जी को यह भी पता चला कि डाक्टर साहब आज पहली बार ही नहीं आए हैं बल्कि तीसरा चक्कर लगा रहे हैं. जब भी वह आते हैं, बच्चे ऐसे गायब हो जाते हैं जैसे गधे के सिर से सींग.

"क्यों, बहू, अभी दस मिनिट पहले तो मधु घर में बैठी थी?" दादा जी ने मधु की मम्मी से पूछा.

"जी हां, मैं तो आप हैरान हूं. अच्छी-भली बैठी पढ़ रही थी. तभी घबराया हुआ टिकू आया. उसने मधु के कान में कुछ खुसर-पुसर की. फिर दोनों ही जाने कहां गायब हो गए. हवा में घुल गए या धरती में समा गए," मधु की मम्मी ने बताया.

अब दादा जी डाक्टर की ओर मुड़े और दृढ़ स्वर में बोले—"डाक्टर साहब, आप एक घंटे बाद दुबारा आ सकते हैं क्या? मैं गली का एक एक बच्चा आप के सामने पेश कर दूंगा."

"जी, नहीं, ऐसे बार बार आने का समय निकालना तो कठिन है. कल रविवार है. दस से बारह के बीच मैं

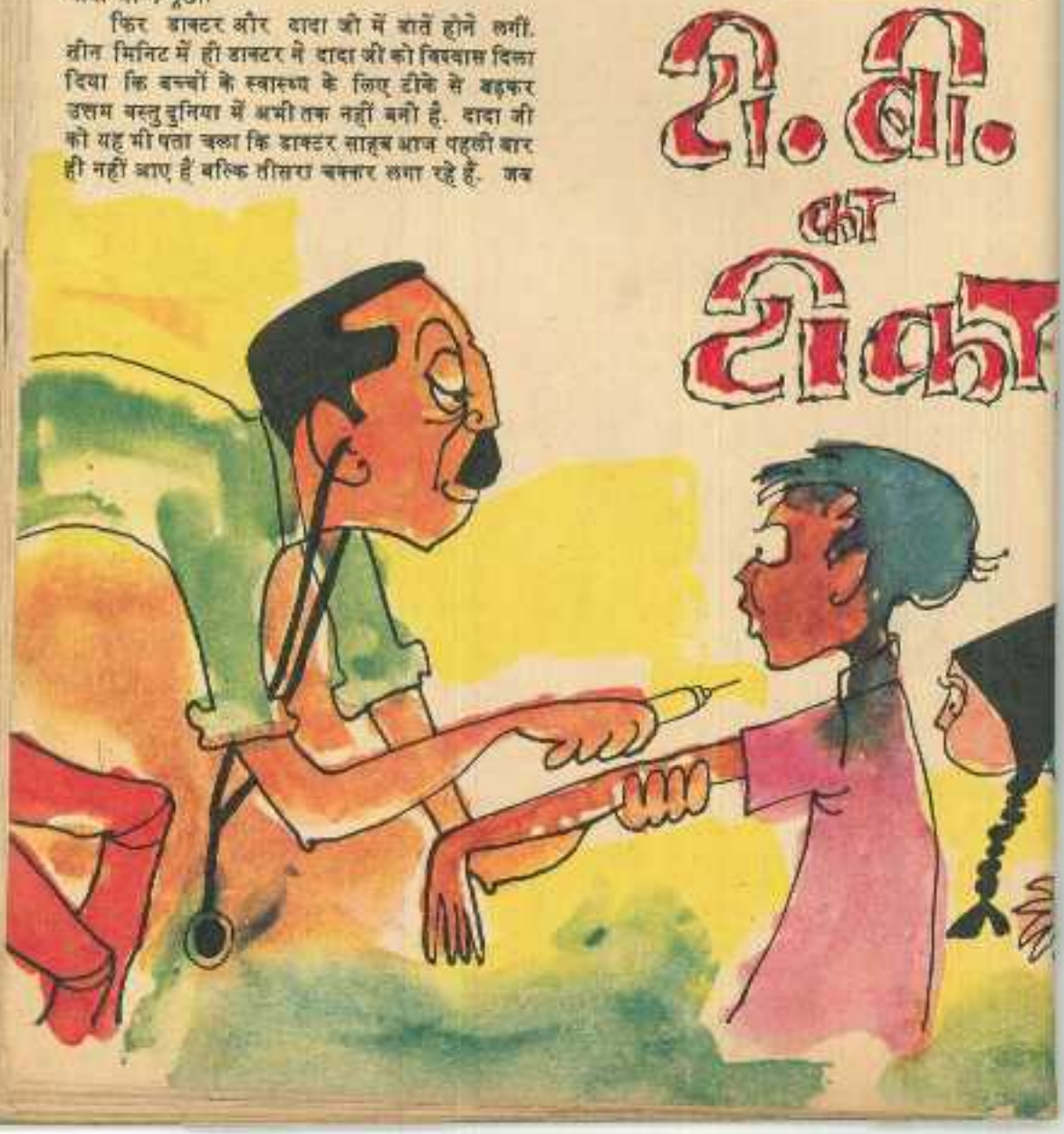

सरकारी डिस्पेंसरी में बैठूंगा. तब आप बच्चों को वहां ला सकें, तो ठीक रहेगा," डाक्टर साहब बोले.

"ठीक है, कल दस बजे बच्चे आपके सामने हाजिर होंगे," दादा जी ने पूरे विश्वास से कहा.

डाक्टर साहब अपना बैग उठाकर चले गए.

दादा जी डाक्टर से कह तो बैठे लेकिन बाद में सोचने लगे कि यदि कल को बच्चे उनके साथ न जाएं तो क्या होगा? डाक्टर उन्हें झूठा समझेगा. गली के लोगों में इंसल्ट होगी सो अलग. बच्चों को समझाया जाए तो कैसे? उन्हें सीधे से यह कह दिया जाए कि चलो, टीका लगवाने चलें, तो यह कुछ ऐसा ही होगा जैसे किसी से कहा जाए कि आ, भई, कुतुब मीनार से नीचे कूदें. इस तरह एक भी बच्चा टीका लगवाने के लिए तैयार नहीं होगा. यदि जोर-जबरस्ती कर बच्चों को डिस्पेंसरी पहुंचा दिया गया, तो हो सकता है कि वे डाक्टर की सिरिंज देखकर अफरातफरी में भाग खड़े हों. सैनिकों को सीमा पर पहुंचाना एक बात है, वहां ले जाकर उन्हें गोलियां खाने-खिलाने के लिए तैयार करना दूसरी बात. मजा तो तब है जब बच्चे हंसते हुए टीका लगवाने के लिए बांहें आगे बढ़ाएं. किसी के चेहरे पर दर्द की एक शिकन तक न आए.

दादा जी काफी देर इस गुत्थी को हल करने की चेष्टा करते रहे, शाम को उन्होंने बच्चों से कहा—"बच्चो, एक पहेली बूझोगे? ठीक बूझने वाले को एक अठन्नी इनाम में मिलेगी."

"पूछिए. . . पूछिए, दादा जी," का शोर मच गया.

"दादा जी, यदि एक से अधिक बच्चों ने सही उत्तर दिया, तो?" कुकी ने पूछा.

"तो अठन्नी सही उत्तर बताने वाले बच्चों में बराबर बराबर बांट दी जाएगी," दादा जी ने ऐलान किया और जेब से अठन्नी निकालकर हथेली पर रख ली. पूछा—"वह कौनसी वस्तु है जिसका हम कतई स्वागत नहीं करते, लेकिन वह हमें बिना बताए जब-तब सिर पर सवार हो जाती है?"

बच्चे सोचने लगे. सब से छोटी आशा बोली—"दादा जी, ऐसी वस्तु तो मेरी आंटी ही हो सकती है. जब भी आंटी आती हैं, मम्मी बाद में उनकी बुराई किया करती हैं!"

दादा जी ने मुस्कराकर कहा—"आशा, यह पहेली तुम्हारी आंटी को देखकर नहीं बनाई गई है!"

आशा का चेहरा उतर गया.

"दादा जी, कुछ अता-पता तो बताइए," आखिर बच्चों ने पूछा.

"अता-पता?" दादा जी सोचने लगे फिर बोले—"वह वस्तु आए साल लाखों लोगों के प्राण ले लेती है."

सुनते ही बबली चीखा—"बूझ लिया. . .बूझ लिया. . . दादा जी, अठन्नी इधर कीजिए."

"पहले कुछ बता तो सही. . ." दादा जी ने अठन्नी उंगलियों में नचाते हुए पूछा.

— अवतारसिंह

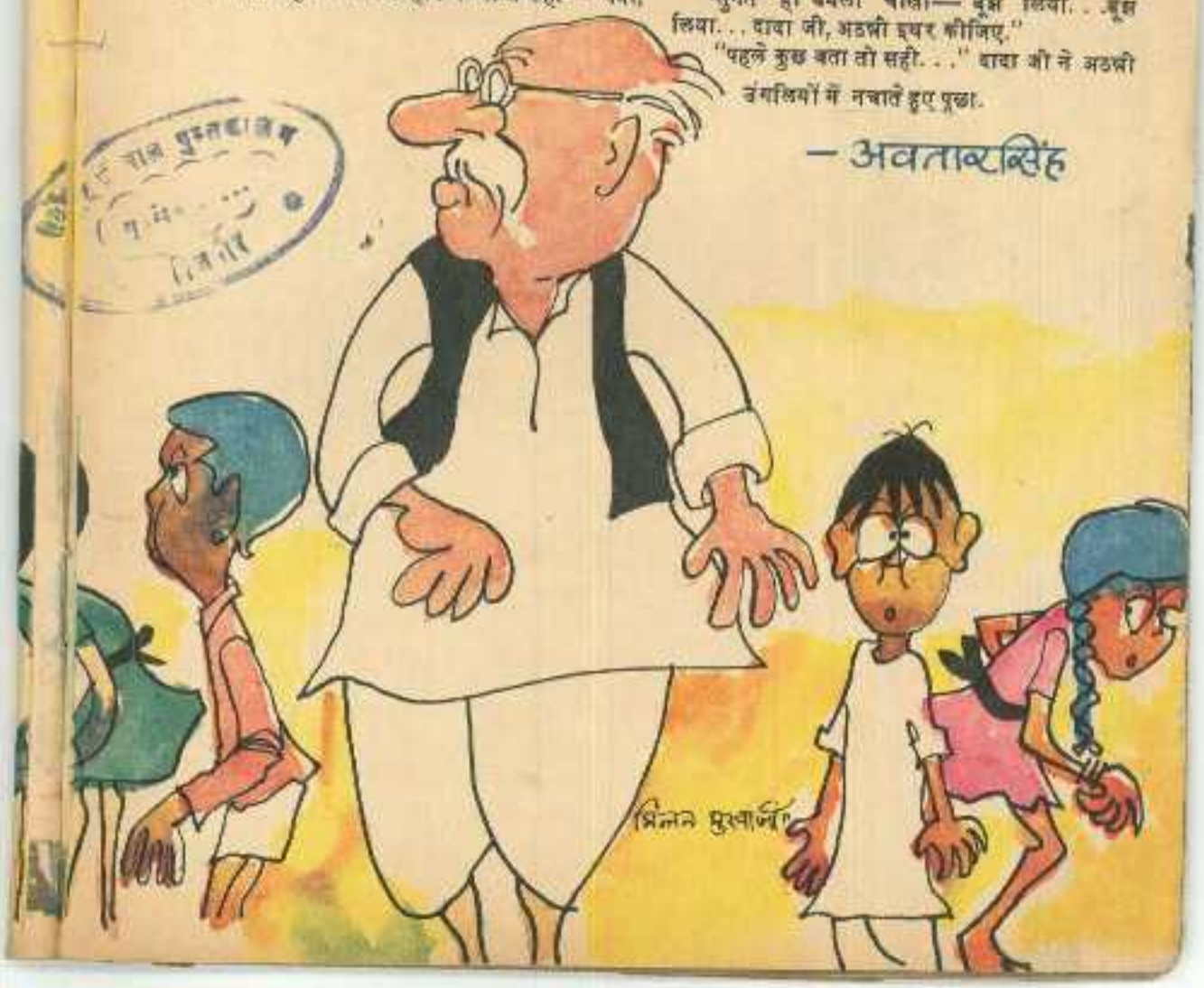

"बूझ...परीक्षा!" बबली बोला.

"गलत!" दादा जी ने कहा.

"गलत कैसे, दादा जी? परीक्षा का कोई भी बच्चा स्वागत नहीं करता. आए वर्ष परीक्षा के डर से लाखों बच्चों के प्राण सूख जाते हैं."

"परीक्षा प्राण सुखाती है, निकाल तो नहीं लेती?" दादा जी बोले.

बच्चे फिर अपनी अकल के घोड़े दौड़ाने लगे. दादा जी ने कहा—"अब तुम अपनी हार मान लो. मैं ही अपनी पहेली बूझता हूं. इस पहेली के दो उत्तर हैं: एक मृत्यु, दूसरा रोग. इन दोनों का कोई भी स्वागत नहीं करता. फिर भी इनका किसी को नहीं पता कि कब आ धमकें और प्राण निकाल लें."

"लेकिन, दादा जी, मेरा उत्तर भी तो काफी ठीक था," बबली बोला.

"हां, पर तुम्हारा उत्तर पूरा तो ठीक नहीं था."

"तो क्या हुआ, दादा जी! अठन्नी तो मुझे मिलनी ही चाहिए. यह तो किसी भी पहेली का नियम होता है कि यदि शुद्ध उत्तर न आए, तो निकटतम शुद्ध उत्तर को पुरस्कार दे दिया जाता है," बबली ने कहा.

"मैं एक पहेली और पूछता हूं. इस बार तुम्हारा यह नियम लागू होता है. मुझे कौन अठन्नी घर ले जानी है! देखो, जो चीज बिना सूचना के जब-तब आती हो उसका कुछ न कुछ इलाज अवश्य करना चाहिए. तुम स्कूल में जब-तब जाओ तो अध्यापक डंडे या हाथ से तुम्हारा इलाज करते हैं. क्यों?"

"सो तो है, दादा जी." बच्चों ने स्वीकारा.

"मुझे बताओ कि मृत्यु और रोग का क्या इलाज है?" दादा जी ने पूछा.

बच्चे फिर सोच में पड़ गए.

"हार मानते हो?" दादा जी ने कुछ मिनिट बाद पूछा.

टिकू ने उत्तर दिया—"दादा जी, मृत्यु का तो इलाज हो ही नहीं सकता."

"शाबाश!" दादा जी ने अठन्नी टिकू के हाथ में धर दी. बोले—"बांट के खाना. तुमने आधा उत्तर ही दिया है... हां तो, जैसा कि टिकू ने बताया, मृत्यु का तो कोई इलाज ही नहीं है. लेकिन रोग का इलाज है."

"दवाई!" पिकी चीखी.

"नहीं, टीका!" दादा जी ने बताया.

बच्चे सन्न रह गए. टीके की चर्चा आते ही उन्हें लगा जैसे किसी ने उन्हें सुइयों के बिस्तर पर बिठा दिया हो.

दादा जी बोले—"मुगल राजा बाबर की मृत्यु कभी नहीं होती यदि उस समय टीके का आविष्कार हो गया होता!"

"तो क्या बाबर आज तक जीवित रहता, दादा जी?" टिकू ने हैरानी से पूछा.

"नहीं नहीं, मेरा मतलब यह था कि यदि उस समय के डाक्टरों को टीके का ज्ञान होता, तो बाबर की मृत्यु कम से कम टी. बी. से नहीं होती," दादा जी ने अपनी भूल सुधारी.

"दादा जी, यह टिब्बी क्या होती है?" बेबी ने पूछा.

"टी. बी. बड़ा भयानक रोग है. भारत में पहले आए वर्ष दस लाख लोग टी. बी. के मुंह में चले जाते थे. फिर सरकार ने टीका लगाना शुरू किया. आज बेचारी टी. बी. को वर्ष में तीन लाख शिकार भी नहीं मिलते!" दादा जी ने बताया.

"च्च...च्च... बेचारी टी. बी.!" पिकी ने टी. बी. के साथ सहानुभूति जताई.

"लेकिन, दादा जी, इसका नाम तो बहुत सुंदर है. टिब्बी जैसे कोका-कोला की बिब्बी. नाम से तो नहीं लगता, यह इतनी खतरनाक चीज है!" बेबी बोली.

दादा जी ने कहा—"सुंदर नाम के धोखे में मत आओ. सभी चमकने वाली वस्तुएं सोना नहीं होतीं. टी. बी. साक्षात् मौत का हवाई जहाज है और टीका..."

"एंटी एयर-क्राफ्ट गन!" टिकू बोल पड़ा.

"वाह! वाह! क्या बात कही है!" दादा जी ने टिकू की दाद दी—"टी. बी. मौत का हवाई जहाज है, तो टीका एंटी एयर-क्राफ्ट गन! इसलिए हमें इस भयानक शत्रु से बचने के लिए अपनी बांह में एक एंटी एयर-क्राफ्ट गन जरूर लगवानी चाहिए."

बच्चे सिर से लेकर पैर तक सिहर गए. बबली बोला—"दादा जी, जब तक शत्रु आक्रमण न करे, युद्ध की तैयारी से क्या लाभ?"

"वाह मियां! आग लगने पर कुआं खोदने वाली बात करते हो!" दादा जी ने बबली की खिल्ली उड़ाते हुए कहा—"हमें हर समय अपनी तैयारी इतनी अवश्य रखनी चाहिए कि शत्रु को आक्रमण करने का साहस ही न हो."

"दादा जी, कोई और बात कीजिए. टीके की बातें सुनकर मेरा दिल धक्-धक् करने लगता है." कुक्की ने कहा.

"दिल का तो काम ही धक्-धक् करना है. अब हम दूसरी बात करेंगे—लेकिन सब बच्चे यह कान खोलकर सुन लें कि कल दस बजे हम सब टी. बी. का टीका लगवाने डिस्पेंसरी जा रहे हैं," दादा जी ने घोषणा की.

लगा कि दादा जी के मुंह से शब्द नहीं, पचास-पचास हजार पौंड के बम बरसे हैं. जो बच्चे खड़े थे, वे खड़े न रह सके, धम्म से चारपाई पर बैठ गए. जो बैठे थे, वे लेट गए. सबके चेहरे ऐसे पीले पड़ गए जैसे उन्हें फांसी की सजा सुना दी गई हो.

किसी तरह कुक्की ने कहा—"दादा जी, हमने पढ़ा है कि टी. बी. का इलाज शुद्ध वायु और प्रकाश है. हम खेलते समय काफी वायु और प्रकाश खा-पी लेते हैं. फिर टीके की क्या जरूरत है?"

"नहीं, टीके के अपने ही गुण हैं. टीके की जितनी प्रशंसा की जाए, थोड़ी है," दादा जी अडिग रहे.

"दादा जी, तभी पहले जमाने में अपने पुत्रों को

युद्ध में भेजने से पहले माताएं उनके माथे पर टीका लगाती थीं!" पिंकी ने कहा.

दादा जी अपनी धुन में बिना उसकी बात सुने कहते गए—"बिल्कुल! टीका भी रोगों का एक इलाज है. टीका लगवाने में टाल-मटोल कैसी! एक बार चोट देकर सिर्फ पांच साल की छुट्टी मिलती है, लेकिन टी. बी. का टीका सात साल में एक लगता है."

"लेकिन, दादा जी, आजकल सरकार लोगों को चैन कहां लेने देती है? जगह जगह तो मध्यावधि चुनाव हो रहे हैं!" बबली ने कहा.

"दादा जी, कहीं इसी तरह हमारे भी कहीं मिड-टर्म टीका न लगा दिया जाए!" पप्पू ने शंका की.

सब हंसने लगे. दादा जी भी हंसी में बोले—"तब तक तुम लोग इतने बड़े हो चुके होगे कि अपने आप इस संकट से निबट सको. तो यह पक्का हो गया कि कल हम टीका लगवाने डिस्पेंसरी जा रहे हैं. साढ़े नौ बजे तैयार होकर तुम सब मेरे घर आ जाना."

अगले दिन आधे बच्चे तो दादा जी के घर पहुंच गए. बाकियों को दादा जी जाकर घसीट लाए. सबके चेहरे इस तरह मुरझाए हुए थे, जैसे कभी काले पानी की सजा भुगतने डाकू लोग निकोबार जाया करते थे. कई तो मन ही मन मनौती मना रहे थे कि हे भगवान, आज टीके लगाने वाला डाक्टर ही बीमार पड़ जाए.

दादा जी बड़ी शान के साथ लश्कर के आगे आगे जा रहे थे. डिस्पेंसरी आ गई. डाक्टर भी बच्चों की फौज देखकर हैरान हो गया. उसने अपने पास ही दादा जी के बैठने के लिए कुर्सी मंगवा दी.

मेज पर स्पिरिट लैंप के ऊपर पानी गर्म होने के लिए रखा गया. पानी में सुइयां डाली गईं, तो आशा रोने लगी. दादा जी ने उसे गोद में उठा लिया और चुप कराने लगे. डाक्टर ने पास खड़े कंपाउंडर से कहा—"जाओ, इस बच्ची के लिए कुछ टाफियां ले आओ."

लेकिन दादा जी ने मना कर दिया. बोले—"डाक्टर साहब, ये यहां टीके लगवाने आए हैं टाफियां खाने नहीं! आप टीके लगाना शुरू कीजिए."

डाक्टर ने टीके लगाने से पहले बच्चों को धैर्य बंधाया—"बच्चो, आज तो घबराने वाली बात ही नहीं है. आज तो मैं कुल एक चौथाई दवाई का टीका लगाऊंगा. अगले रविवार तुम्हें फिर आना होगा. तब मैं यह टीका टैस्ट करूंगा. जरूरत हुई, तो दूसरा बड़ा टीका लगाऊंगा—तीन चौथाई दवाई का. पर बच्चों को दूसरा टीका लगाने की जरूरत कभी कभी ही पड़ती है."

डाक्टर ने सुई लगाकर सीरिंज में थोड़ी-सी दवाई भरी. लाइन में सबसे आगे पप्पू खड़ा था. दादा जी ने उसकी कलाई पकड़कर डाक्टर के आगे की. पप्पू ने आंखें मूंद लीं. लेकिन डाक्टर ने पप्पू की बजाय दादा जी की कलाई पकड़ी. बोले—"पहले आप ही टीका लगवा लीजिए."

दादा जी घबराकर कुर्सी से उठ खड़े हुए. बोले—"हें हें! डाक्टर साहब, यह आप कैसा मजाक करते हैं? मैं तो इतना बड़ा हो गया हूं. मेरी उम्र कोई टीका

(शेष पृष्ठ ६९ पर)

छोटी छोटी बातें—

—सिम्स

यह कैसी आजादी! यों लेटो यों बैठो, यों रोओ यों गाओ, यह करो वह मत करो; मम्मी की तानाशाही के मारे नाक में दम है!

अरे, तो क्या हुआ! पापा भी तो रात दिन यही शिकायत करते हैं!

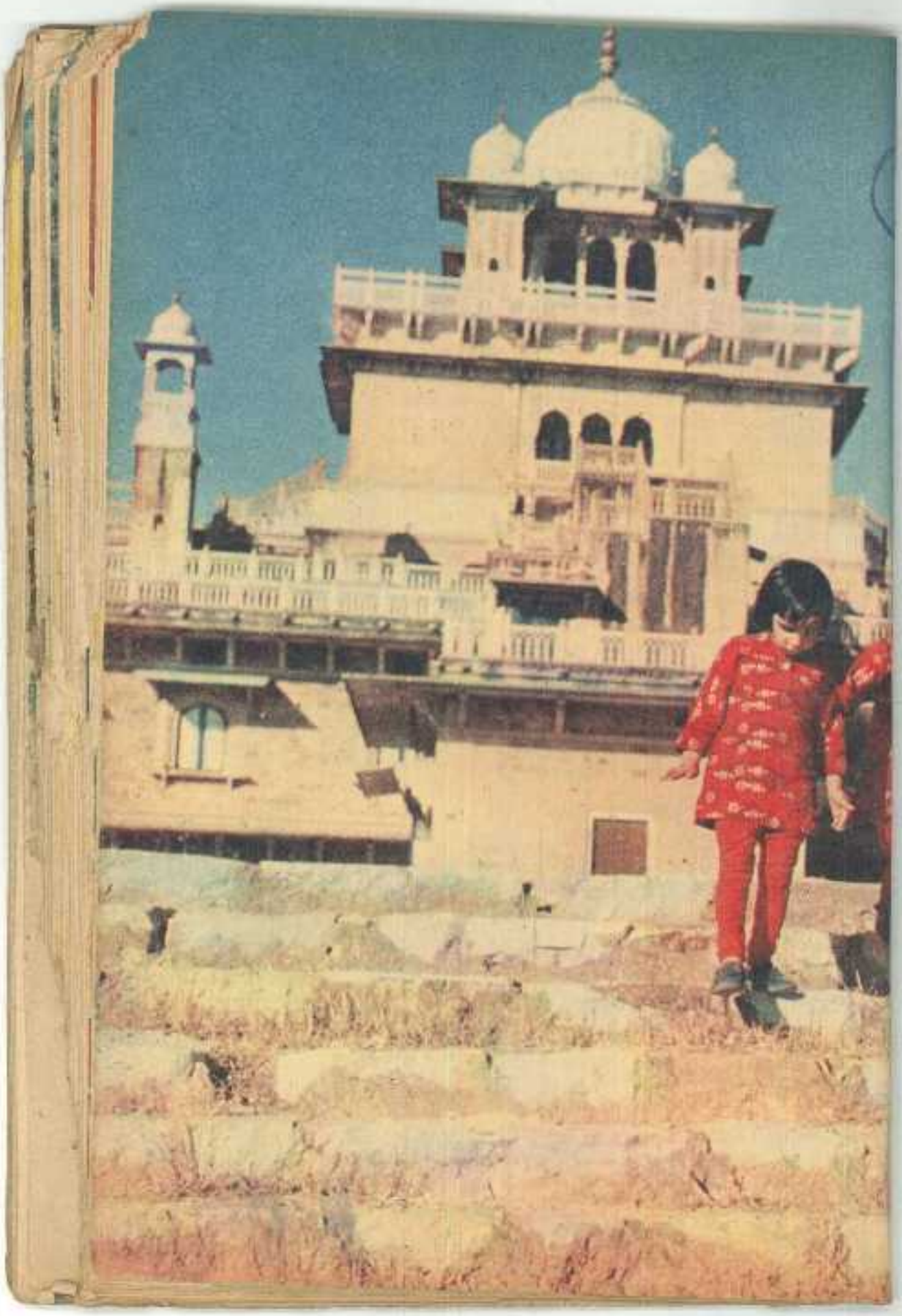

सपनों की सीढ़ियों पर

बाल पुस्तकालय
पु० सं० ......
बिजनौर

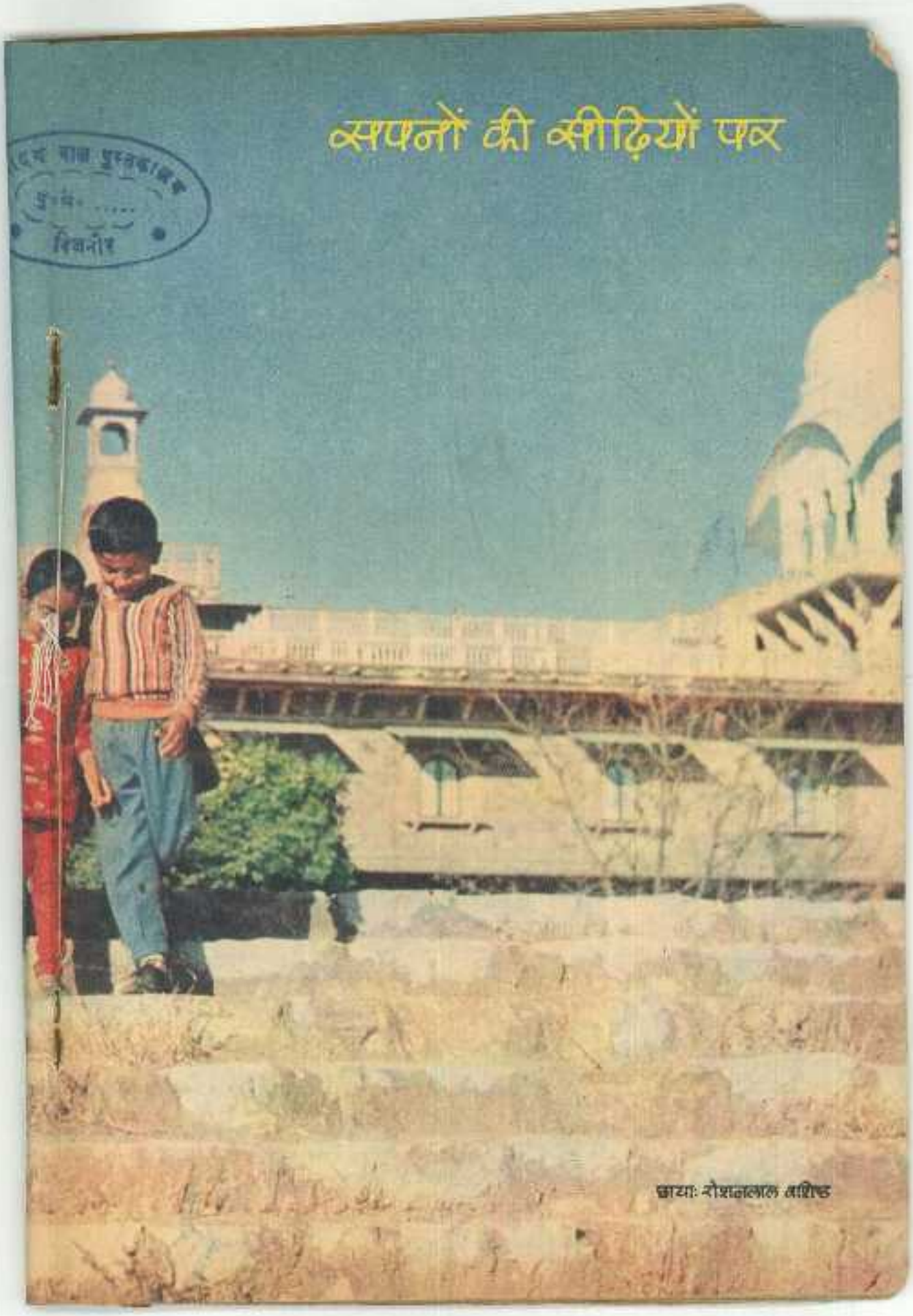

छाया: रोशनलाल वशिष्ठ

से निकल गया, तो एक लंबे-तगड़े आदमी ने पुलक की पीठ ठोकते हुए कहा—"शाबाश बेटे, शाबाश!"

जब लोग बस में आकर बैठ गए, तो वह लंबा-तगड़ा आदमी पुलक से बातें करने लगा.

"कहां जा रहे हो, बेटे?"

"मैं मंडी के हाई स्कूल में दाखिल होने जा रहा हूं."

"तुम अकेले ही हो या और भी कोई तुम्हारे साथ है?"

"अकेला ही हूं. पिता जी मेरे साथ आने वाले थे, लेकिन वह अचानक बीमार पड़ गए."

"तुम्हारा नाम?"

"पुलक."

"क्या तुम पहले भी मंडी गए हो?"

"नहीं, पहली बार जा रहा हूं."

"यह बस रात को दस बजे मंडी पहुंचेगी. तब तुम कहां जाओगे? कोई रिश्तेदार है तुम्हारा वहां?"

"रिश्तेदार कोई नहीं है. मैं रात बस के अड्डे पर काट लूंगा और सुबह स्कूल चला जाऊंगा. वहां मुझे छात्रावास में रहने की जगह मिल जाएगी."

बस के सब यात्री पुलक की तरफ देखने लगे थे. वह लंबा-तगड़ा आदमी, जो देखने में पुलिस का अफसर लगता था, बोला—"बेटे, चिंता मत करो. मंडी पहुंचकर तुम्हें बस के अड्डे पर रात बिताने की जरूरत नहीं पड़ेगी. तुम हमारे घर चलना. सुबह मैं स्वयं तुम्हें प्रिंसिपल साहब के पास ले चलूंगा."

पुलक ने उन्हें धन्यवाद दिया. फिर उस आदमी ने पुलक से और भी प्रश्न पूछे. वह पहले कौनसे स्कूल में पढ़ता था? आठवीं की परीक्षा में उसने कितने अंक प्राप्त किए थे और वह पास के स्कूल में जाने के बजाए इतनी दूर के स्कूल में क्यों जा रहा है? पुलक ने सब प्रश्नों के सीधे-सच्चे उत्तर दे दिए. बाद अंतिम प्रश्न के उत्तर में उसने बताया कि वह अपने कुछ मित्रों की वजह से और विशेषकर महेश नाम के लड़के से स्पर्धा के कारण वहां जा रहा है, तो वह आदमी खूब जोर से हंसने लगा.

बस पड़ाव पर आकर रुक गई थी. यात्रियों ने देखा बाहर बारिश भी थम गई थी. ड्राइवर बस के इंजिन का ढक्कन उठाकर कुछ देख रहा था. कंडक्टर भी वहां खड़ा था. अब ड्राइवर इंजिन का ढक्कन बंद करके अपनी सीट पर आ बैठा और गाड़ी स्टार्ट करने लगा. किंतु यह क्या? इंजिन तो स्टार्ट ही नहीं होता था. उसने फिर इंजिन का ढक्कन खोला और कुछ तारों को इधर-उधर किया, लेकिन इंजिन फिर भी स्टार्ट नहीं हुआ. अब उसने यात्रियों की तरफ मुड़कर कहा—

"गाड़ी खराब हो गई है, आगे नहीं जाएगी."

यात्रियों पर जैसे कोई भारी मुसीबत आ पड़ी. एक ने पूछा—"क्या दूसरी गाड़ी नहीं आ सकती?"

ड्राइवर बोला, "नहीं, यह आखिरी गाड़ी थी. अब आप लोगों को सुबह दस बजे की गाड़ी मिल सकती है."

उस लंबे-तगड़े आदमी ने पूछा, "क्या मंडी या जोगिंदर नगर को टेलीफोन करके गाड़ी नहीं मंगवाई जा सकती? यहां पास कोई टेलीफोन होगा?"

ड्राइवर ने बताया, "थोड़ी दूर पर एक डाक बंगला है. वहां टेलीफोन भी है. लेकिन टेलीफोन करने पर भी रात में गाड़ी नहीं आ सकती, क्योंकि सड़क खराब हो चुकी है. अच्छा यही है कि आप लोग डाक बंगले में रात काटें और सुबह दस बजे की बस पकड़ लें."

और कोई चारा न देखकर यात्री बस से उतरे और डाक बंगले की तरफ चल पड़े. पुलक भी अपना सामान उठाकर उनके पीछे-पीछे चल दिया. डाक बंगले में काफी कमरे थे. सबको सोने की अच्छी जगह मिल गई. पुलक बरामदे में बिस्तर रखकर उसपर बैठ गया और सोचने लगा—'अब मैं क्या करूं? सुबह दस बजे की गाड़ी पकड़ूंगा, तो एक बजे से पहले नहीं पहुंचूंगा. तब तक स्कूल बंद हो जाएगा, क्योंकि कल शनिवार है. स्कूल की छुट्टी ज्यादा से ज्यादा एक सप्ताह तक खुली रहती है और कल आखिरी दिन है.'

वह सोच ही रहा था कि लंबा-तगड़ा आदमी उसके सामने आ खड़ा हुआ और बोला—"बेटे, अंदर जाकर सो जाओ. ठंडी हवा चल रही है. सरदी लग जाएगी."

पुलक बोला, "बस, खाना खाकर अंदर चला जाऊंगा."

●

उस आदमी के जाने के बाद पुलक फिर सोचने लगा. उसे कोई रास्ता नजर नहीं आ रहा था. वह बड़ी देर तक वहां बैठा रहा. डाक बंगले में आए हुए यात्री सो गए, तब भी वह बाहर बैठा सोचता रहा. आखिर उसने एक निश्चय मन में कर लिया. उसने पीठ पर बिस्तर बांधा और उस काली रात में, सुनसान और भयानक सड़क पर पैदल ही चल पड़ा.

उसने अनुमान लगाया कि मंडी अब बीस-इक्कीस मील दूर है. उसके पास रात के आठ-नौ घंटे हैं. यदि वह धीरे-धीरे भी चले, तो भी सुबह होते होते वह मंडी पहुंच सकता है.

अभी वह कोई एक मील चला था कि उसे अंधेरे में सड़क के बीचोंबीच एक जानवर खड़ा दिखाई दिया. उसकी आंखें अंधेरे में अंगारों की तरह चमक रही थीं. पुलक के पांव रुक गए. उसकी इच्छा हुई कि यहां से वापस मुड़ जाए, लेकिन दूसरे ही क्षण उसने हिम्मत बांधकर एक पत्थर उठाया और उस तरफ फेंक दिया. जानवर भागकर झाड़ियों में घुस गया.

एक जगह सड़क के किनारे पड़ा हुआ उसे बांस का मोटा डंडा मिल गया. उस डंडे को पाकर उसकी हिम्मत दुगुनी हो गई और वह तेज कदमों से चलने लगा. रास्ते में उसे कुछ भयानक खड्ड पार करने पड़े. यहां कुछ देर के लिए उसे भूतों के डर ने भी सताया लेकिन धीरे धीरे उसने सारे डर पर काबू पा लिया. डंडे को सड़क पर बजाता हुआ वह चलता ही गया. अब थोड़ी थोड़ी चांदनी भी निकल आई थी, इसलिए अंधेरा भी कम हो गया था. वह गीत गाता, सीटी बजाता आगे बढ़ता गया.

उसे पता ही नहीं चला कि मटमैली चांदनी कब सुबह के उजियाले में घुल गई. उसे मंडी की तरफ से आती हुई कुछ लारियां और बसें मिलीं. कुछ दूर चलने पर उसे औरतों की एक टोली मिली जो पानी के भरे हुए घड़े सिर पर रखकर चली आ रही थी. पंछी अपने अपने घोंसलों से बाहर निकलकर कलरव करने लगे. तभी पुलक को ब्यास नदी और उसपर पड़ा हुआ तारों का पुल दिखाई दिया. वह मंडी शहर की सीमा में पहुंच चुका था.

बड़ी देर तक वह पुल पर खड़ा होकर ब्यास नदी के नीले, गहरे पानी को देखता रहा. नदी में बड़े बड़े शहतीर बहे जा रहे थे और चमड़े की मोट पर बैठे हुए तीन आदमी किनारों पर रुके शहतीरों को आगे बढ़ाने में लगे हुए थे. नदी के किनारे बहुत से छोटे छोटे मंदिर थे. पुलक का हृदय आनंद से भर गया.

लगता था कि उसकी सारी मुश्किलें एक जादू के स्पर्श से अपने-आप आसान हो गई हैं. स्कूल ढूंढते उसे देर नहीं लगी और स्कूल के गेट पर ही उसका प्यारा दोस्त भरत मिल गया. वह उसे छात्रावास में ले गया. छात्रावास के सब लड़के उसके आस-पास जमा हो गए. जब उसने लड़कों को बताया कि किस तरह वह रात भर पैदल चलकर यहां पहुंचा है, तो सब लड़के आश्चर्य से उसकी ओर देखते रह गए.

●

नहा-धोकर उसने कपड़े बदले और नाश्ता किया. अभी आठ बजे थे. दस बजे स्कूल खुलना था. दो घंटे तक लड़के उसे घेरे रहे और उसकी साहसिक यात्रा की कहानी सुनते रहे. जब स्कूल की घंटी बजी, तो पुलक तैयार हो कर प्रिंसिपल से मिलने चला.

प्रिंसिपल के कमरे के बाहर पहुंचनेपर उसका दिल धक्धक् करने लगा—'अगर प्रिंसिपल ने मुझे दाखिल नहीं किया तो?' इस आशंका से उसका दिल घबराने लगा. जब प्रिंसिपल के कमरे से घंटी बजी और वह अंदर दाखिल हुआ, तो भी उसका दिल धक्धक् कर रहा था.

प्रिंसिपल ने पूछा, "कहो, क्या चाहते हो?"

पुलक का गला सूख गया. किसी तरह वह बोला—"मैं नवीं कक्षा में भर्ती होने के लिए आया हूं."

प्रिंसिपल ने कहा, "इतने दिन क्या सोए रहे? अब हमारे पास कोई जगह नहीं है."

पुलक ने अपनी सफाई दी. "जी, पिता जी अचानक बीमार पड़ गए, इसलिए देर हो गई."

"तो मैं क्या करूं?" प्रिंसिपल रुखाई से बोले, "हमारे पास जितनी जगहें थीं उतने लड़के हमने ले लिये."

पुलक ने सारी स्थिति बताई कि वह इतनी दूर से आया है, आठवीं में प्रथम श्रेणी प्राप्त की है वगैरह वगैरह, किंतु प्रिंसिपल पर उसकी बात का कोई असर नहीं हुआ. आखिर पुलक भारी मन लिये कमरे से बाहर निकल आया.

●

छुट्टी के बाद जब लड़के छात्रावास में आए, तो पुलक को बिस्तर बांधकर तैयार बैठा देखकर अचंभे में पड़ गए. पुलक ने उन्हें सारी बात बताई, तो वे क्रोध के बौखला उठे. तभी वहां प्रिंसिपल का चपरासी आया और बोला—"पुलक कौन है? उसे प्रिंसिपल साहब बुला रहे हैं."

अब की बार जब पुलक प्रिंसिपल के कमरे में दाखिल हुआ, तो उसने देखा कि वह लंबा-तगड़ा आदमी जो उसे बस में मिला था, प्रिंसिपल के साथ बैठा बातें कर रहा है. आते ही उस आदमी ने पूछा, "तुम यहां से कैसे आए?"

पुलक बोला, "पैदल चलकर."

बात सुनते ही वह आदमी कुर्सी पर उछल पड़ा—"पैदल? अंधेरी रात में उस सुनसान सड़क पर तुम बाईस मील पैदल चलकर आए?"

पुलक ने बताया कि उसके सामने एक ही रास्ता था. यदि वह दूसरे दिन की बस की प्रतीक्षा करता, तो यहां स्कूल बंद होने से पहले नहीं पहुंच सकता था.

उस आदमी ने पूछा, "तुम्हें एडमिशन मिल गया?"

पुलक ने सिर झुका लिया, बोला, "नहीं, मैं आज ही वापस आ रहा हूं."

उस आदमी ने अर्थपूर्ण दृष्टि से प्रिंसिपल साहब की ओर देखा, फिर बोला, "प्रिंसिपल साहब, मैं कोई अधिकारी नहीं हूं कि इस बच्चे की सिफारिश कर सकूं. इतना जरूर जानता हूं कि ऐसे बच्चों के लिए कोई रास्ता लंबा नहीं होता, इन्हें आगे बढ़ाकर राहें भी धन्य होती हैं. और यह तो सिर्फ इसका पहला पड़ाव है."

प्रिंसिपल साहब कुछ क्षण जड़ की तरह बैठे रहे, फिर कुर्सी से उठ खड़े हुए. पुलक के पास आकर उन्होंने उसकी पीठ पर हाथ रखा और बोले, "नहीं, तुम वापस नहीं जाओगे." उन्होंने घंटी बजाकर चपरासी को बुलाया और उससे कहा, "इस लड़के को छात्रावास में पहुंचा दो. आज और कल यह हमारा मेहमान होगा, और परसों से यह हमारा विद्यार्थी बनेगा. इसके लिए एक अतिरिक्त सीट का प्रबंध किया जाएगा." ●

५० खन्ना मार्केट, लोदी रोड, नई दिल्ली-३.

हंसी हंसी में एक बाजूनी लड़की के मुंह पर एक अध्यापक के टेप चिपका देने से स्कूल में उपद्रव भड़क उ जिसमें एक छात्र को मामा शकुनि ने छुरा भोंक दिया और उस्ताद बनवारी के साथ भाग निकला.

अगले दिन नवें दरजे में राम और श्याम नाम के दो नए विद्यार्थी नज़र आए. दीपक और रंगनाथ ने उन्हें छे और जवाब में तगड़ी मार खाई. संध्या को टाउन हाल में दोनों ने अपना दुखड़ा उस्ताद बनवारी और मामा शकु को सुनाया कि तभी उनकी भी राम और श्याम से भिड़ंत हो गई. उनकी मार से दोनों चेले बेहोश हो गए और उस्ता और मामा दोनों भागकर अपने बॉस जोसेफ के पास पहुंचे. इधर दोनों बेहोश बच्चों को पुलिस उठाकर ले गई.

जोसेफ एल-एस-डी की गोलियों का धंधा करने वाले एक गैंग का सरदार था और डोरियन है उसकी सेक्रेटरी इस जबरदस्त गिरोह से लड़ने वाले राम और श्याम केंद्रीय खुफिया विभाग के दो जासूस छोकरे थे.

दीपक और रंगनाथ को पुलिस ने इलाज के लिए अस्पताल में भेज दिया था. जोसेफ के एक गुर्गे ने अपनी ए नर्स प्रेमिका से मिलकर उन दोनों को खत्म करना चाहा. लेकिन ऐन मौके पर राम और श्याम पहुंच गए. दीपक औ रंगनाथ तो बच गए लेकिन डाक्टर वेशधारी इस गुर्गे ने भेद खुल जाने के डर से उस नर्स को ही गोली से उड़ा दिया औ खुद राम और श्याम की चालाकी का शिकार हो गया. लेकिन संध्या समय एक स्टेनगन की कड़कड़ाती गोलियों ने रा और श्याम जैसी दो आकृतियों को छलनी कर दिया. अब आगे पढ़ो एल-एस-डी की नशेबाज दो सहेलियों का हाल.

उद्योगपति मुहम्मद गनी उन अभागे आदमियों में थे, जिन्हें सब-कुछ होते हुए भी चैन नहीं मिलता. अपने बढ़ते हुए कारोबार को सही ढंग से संभालने के लिए उन्होंने बीसियों बरस पहले अपना यह उसूल बना लिया था कि रात को बारह बजे सो जाएं और सुबह चार बजे बिना नागा उठ जाएं. चार घंटे की नींद लेकर वह सिर्फ दो घंटे ही घर रह पाते और शेष अठारह घंटे होश ही न रहता कि उनका कोई परिवार भी है.

संतान के नाम पर उनकी सिर्फ एक बेटी थी—आयशा. वह सतरहवां पार करने वाली थी. घर में दास-दासियों की कमी नहीं थी. लंबी-चौड़ी कोठी हर सुबह नरगिस के फूल की तरह खिली मिलती थी. कोठी के चारों तरफ बाग था. दो बंदूकधारी गोरखे पहरा देते थे. तीन कारें थीं—एक इम्पाला, एक डीज और एक पुराने जमाने की विंटेज रॉल्स रॉयस. इस तीसरी गाड़ी की देखभाल बड़े करीने से होती थी, क्योंकि वह कुछ खास खास मौकों पर शो के लिए निकलती थी. हॉर्न के नाम पर जब उसकी झंटी बजती, तो रास्ता चलने वाले उस खूबसूरत पुरातन नमूने को देखने के लिए ठहर जाते.

बेगम गनी अपने दोनों पैरों से मजबूर थीं. चार साल हुए उन्हें लकवा मार गया था. तब से एक मेहनती आया सदा उनके साथ लगी रहती थी. वह उन्हें कुर्सी पर बिठाकर बाग में घुमाया करती, नहलाती-धुलाती, और लंच व डिनर पर लाती-ले-जाती. अब तक उनकी बेटी आयशा ने उन्हें कोई तकलीफ नहीं दी थी. वह एक

—— चंदर ——

एजेंट 00½

चंचल, नटखट और बड़ी ही हंसमुख लड़की थी. स्थानीय कान्वेंट स्कूल से उसने अपना कैंब्रिज किया था. लेकिन कालिज में आने के एक साल बाद ही बेगम गनी उसकी तरफ से फिकरमंद रहने लगी थीं. वह रात को देर से घर लौटती थी और अजीब अजीब हरकतें करती थी. कभी कभी उनको शक होने लगता था कि वह पागलपन की तरफ तो नहीं जा रही है. लेकिन सुबह होते ही उनका यह शक रफू हो जाता था. अनेक बार अपनी आया को उन्होंने उसका मुंह सूंघने की हिदायत दी—कि कहीं ऐसा तो नहीं लड़की को शराब पीने की आदत पड़ गई हो. जब आया ने लाख कोशिश करने पर भी आयशा की आंखों में शराब की गंध नहीं पाई, तो एक रातको आयशा के सोते सोते स्वयं बेगम गनी कुरसी के पहिए सरकाती सरकाती उसके पलंग के पास गई.

आयशा सोते सोते भी हंस रही थी. बेगम ने होंठ काट लिये. आगे को झुककर जो उसका मुंह सूंघने की कोशिश की, तो कुरसी का संतुलन बिगड़ गया. वह चिल्ला कर आधी आयशा के तन पर और आधी फरश पर गिरी.

हड़बड़ा कर आयशा उठ बैठी. आंखें फाड़कर उसने माजरा जानने की कोशिश की. फिर खिलखिला कर हंस पड़ी और बोली :

"वाह, अम्मीजान! यह बुढ़ापे में आप को कलाबाजियां खाने की क्या सूझी?"

"मैं तुझे देखने चली आई थी, बेटी," मां ने दर्द की कराहट को मन में ही रोककर कहा. "जरा उठ कर कुरसी पर तो बिठा दे मुझे."

"मुझे देखने चली आई थी!" ताज्जुब से आंखें फाड़कर और उनकी आखिरी बात अनसुनी करके आयशा बोली, "ऐ वाह! गुडी, गुडी, माई मौम! कम आन, लेट अस डांस (आओ नाचें)—क्या था वह सौंग—वाह—याद आ गया—'आई लव यू सो, ओ डौंट यू गो'—वाह—कम आन, मौम, तुमको रौक-एन-रौल तो आता है ना?" इसके बाद बिना जवाब का इंतजार किए ही वह पलंग पर से कूद पड़ी और तुरंत एक हाथ, एक पैर आगे बढ़ाकर ऊपर-नीचे हिलने लगी. इसके बाद गरदन को झटका दे-देकर उसने हवाई स्पीड से गाना शुरू किया—"आई लव यू सो, लव यू सो, लव यू सो, यू सो, यू सो, यू सो—सो सो सो सो सो, गो गो गो गो गो गो."

"आयशा!" बेगम गनी जोर से चिल्लाईं.

"कम आन, कम आन, मौम. बी ए स्पोर्ट, यू ओल्ड हैग (जिंदादिल हो जा, बूढ़ी खूसट)—ओह, सो सो सो सो सो— आई. . .ल. . .व. . .यू. . . सो!"

बेगम आयशा और अधिक नहीं देख सकीं. आज तक उसने अपनी बेटी का यह परिवर्तन उसके पिता से छिपाया था. आज वह उन्हें बता कर रहेंगी. इस निश्चय से उन्हें बल मिला, और वह घिसट-घिसटकर अपनी कुरसी के नजदीक जाने का प्रयास करने लगीं. लेकिन तब तक आयशा को अपने गीत के प्रदर्शन के लिए एक नया तरीका सूझ गया. वह झपटकर पहियेदार कुरसी को सीधा करके उस पर बैठ गई. इस बीच उसकी गरदन के झटके पल भर को भी नहीं रुके. कुरसी पर बैठ कर उसने उसके पहियों को आगे-पीछे तेजी से हिलाते हुए, गरदन को और भी झटके देने शुरू किए—"डौंट गो, लव यू सो—डौंट सो, लव गो—"

"आय. . .या!" उसकी अम्मीजान चिल्लाईं. फिर उन्होंने घबरा कर दरवाजे की तरफ देखा, और उन्हें लगा कि दरवाजे के बीचोंबीच एक मूर्ति खड़ी है. वह मूर्ति आयशा के पिता मुहम्मद गनी की थी.

आयशा को फुरसत नहीं थी यह देखने की कि कौन आता है, कौन जाता है. उसके झटके और गीत के बोल बराबर जारी थे. उसके पिता ने आगे बढ़कर बेगम को अपने मजबूत हाथों में उठाया और कमरे से बाहर निकल आए.

कुछ देर के बाद जब वह कमरे में आए, तो उन्होंने देखा कि कुरसी पीठ के बल गिरी पड़ी थी. उसी की आकृति में उससे चिपकी आयशा भी कुरसी के साथ साथ औंधी पड़ी थी. मुंह का आकार गोल था और उसमें बराबर संगीत का एक स्वर निकल रहा था—"सो?—सो?—सो?"

आया को भेजकर उन्होंने बूढ़े शोफर को जगाया और डाक्टर को फोन किया. दस मिनिट के अंदर अंदर शोफर डाक्टर को लेकर आ गया. आया और डाक्टर ने मिलकर आयशा को कुरसी से उठाया और पलंग पर लिटाया.

उसके शरीर की परीक्षा कर के डाक्टर ने उसे आया के जिम्मे सौंपा और कमरे से बाहर आ गए. पीछे पीछे आए आयशा के पिता.

"सॉरी, सर," डाक्टर ने कहा, "मगर यह एल-एस-डी का करिश्मा मालूम होता है. सुबह को स्टूल और यूरीन टेस्ट करने होंगे—लेकिन जहां तक मैं समझता हूं, यह एल-एस-डी है."

"एल-एस-डी क्या होती है, डाक्टर?" आश्चर्य से गनी साहब ने पूछा.

"यह एक नशीला पदार्थ होता है, सर," डाक्टर ने कहा. "इंग्लैंड और अमरीका में इसकी हवा चली है

खास तौर से स्टूडेंट्स में. असगद नाम की अंगरेजी—कहना चाहिए स्पेनिश दवाई के मिश्रण से लाइसरजिक एसिड तैयार होती है. उसके किसी खास कैमिकल प्रोसेस से डी-लाइसरजिक एसिड डाइथालामाइड टारट्रेट का पाउडर यानी 'एल-एस-डी-२५' तैयार होता है."

डाक्टर अपनी फीस लेकर चला गया. लेकिन अगले दिन सुबह को आयशा एकदम सही थी. उसे यह याद भी नहीं था कि पिछली रात को कोई घटना हो गई थी. जब वह अपने पिता के साथ नाश्ते की मेज पर पहुंची, उसकी अम्मीजान उसे आश्चर्य से घूर रही थीं.

"हलो, मम्मी! गुड मार्निंग टु यू." आयशा ने बच्चों की तरह ही सरल मुसकान के साथ कहा.

"गुडमार्निंग, डियर," कांपती हुई आवाज से आयशा की मां ने कहा.

सब लोग इतमीनान से चाय पीने लगे. उसी बीच आयशा ने कहा, "फादर फर्ग्यूसन ने एक क्लाइड होम के लिए दो हजार रुपये चंदे की रिक्वेस्ट की है. विल यू प्लीज औब्लाइज हिम विद ए बिअरर चैक, पोप (क्या आप एक बिअरर चैक देकर उनके प्रति उपकार कर सकेंगे, पोप?)"

आयशा की अम्मीजान ने एक टोस्ट पर, ढेर-सा मक्खन लगाकर उसके पिता को दिया. उन्होंने उसका एक छोटा-सा कोना तोड़ा और वह भी हाथ में लिये रहे.

"तुम कितनी गोलियां एक साथ परचेज करती हो, बेबी?" उन्होंने शांत स्वर में पूछा.

आयशा की चाय की प्याली छलक गई. वह मुंह बाकर अपने पिता की ओर देखती रह गई. वह निश्चित भाव से उत्तर की प्रतीक्षा करते रहे. उन्होंने लड़की को झुठलाया नहीं, उसकी भर्त्सना नहीं की, उसे डांटा नहीं. वह सिर्फ तथ्य जानना चाहते थे.

वह फूट-फूट कर रो पड़ी. दोनों हाथों से मुंह छिपा कर बोली, "मैं उसके बिना नहीं रह सकती, पोप. मैं उसके बिना नहीं रह सकती."

"फिकर मत करो, बेबी. अगर तुम उसके बिना नहीं रह सकती, तो हम उसे तुम्हारे लिए परचेज करेंगे. सवाल का जवाब दो. कितनी गोलियां एक साथ खरीदती हो तुम?"

"कभी तीस, कभी चालीस," आयशा ने छाती पर ठोढ़ी टिका कर कहा.

"एक गोली की कीमत?"

"पचास— लेकिन अब बढ़ जाएगी."

"कौन देता है ये गोलियां तुम्हें?"

"कीमत चुकाने के एक हफ्ते बाद एक पार्सल आता है."

"कीमत कौन वसूल करता है?" गनी साहब ने टोस्ट का टूटा हुआ कोना अब मुंह में रखते हुए कहा.

"क्लब में एक लैटर बाक्स लगा है. उसमें क्लब के सुधार के लिए सब कोई अपने अपने सुझाव डाल सकते हैं. उसी में सब लोग अपना अपना लिफाफा डाल देते हैं. लिफाफे में आर्डर के साथ नोट रख देते हैं."

"कीमत बढ़ने वाली है यह किसने बताया?"

"जब क्लब में जाते हैं, तो उसी बाक्स पर टाइप्ड नोटिस चिपका मिलता है. उसमें दस, बीस, तीस और चालीस गोलियों के पैकेट के लिए संकेत में कीमतें लिखी होती हैं," उसने अंगरेजी में कहा.

"इस चीज से तुम्हें किसने इंट्रोड्यूस किया?"

"साथी-संगियों में से कोई भी एक-दूसरे को इंट्रोडक्शन-पिल दे देता है. हर दस गोलियों के साथ एक गोली दूसरों को इंट्रोड्यूस करने के लिए होती है."

"लिफाफे पर क्या पता लिखा होता है?"

"पोस्ट बाक्स नंबर जीरो, जीरो, जीरो."

"पार्सल क्लब के पते पर आते हैं?"

"यस, पोप."

"इन पार्सलों को डाकिया लेकर आता है?"

"डाकिया कभी लेकर नहीं आता," आयशा ने बताया. "इन्हें कोई प्राइवेट आदमी लाता है. उन पर दूसरे शहरों के लेबिल लगे रहते हैं."

"तुम रोज एक गोली लेती हो?"

आयशा चुप रही. पिछले तीन-चार दिनों से वह रोज ले रही थी—लेकिन साथ ही साथ उसे दो गोलियों की आदत पड़ गई थी.

"तुम नहीं जानतीं तुम इस गोली की आदत पाल कर किस गहरे खड्ड में गिरती जा रही हो. जिन लोगों को समाज की लाज-शर्म का ध्यान नहीं, वे कभी तुम्हारी बेखबरी और बेहोशी का फायदा उठा सकते हैं. गलत मौकों पर तुम्हारे फोटो खींच कर मुझे ब्लैकमेल कर सकते हैं—सारा कारोबार देखते ही देखते चौपट कर सकते हैं—और फिर तुम्हें एक एक गोली के लिए कुत्ते की तरह जीभ निकाले सारे शहर में घुमा सकते हैं..."

इस बार आयशा ने मेज पर रखे अपने हाथों में मुंह छिपा लिया और रोते रोते बोली, "ओह, पोप! आयम रुइंड (मैं बरबाद हो गई). अब मैं क्या करूं? मैं क्या करूं, पोप? मुझ से इस गोली के बिना नहीं

जाएगा. मैं पागल हो जाऊंगी."

"पागल तो तुम हो ही चुकी हो," आयशा के पिता ने चाय का प्याला होंठों से लगाते हुए कहा. "इस वक्त जो कुछ भी तुम कर रही हो, वह एक पागलपन के दौरान कर रही हो. दान के बहाने झूठ बोलकर तुम अपने फादर से रुपया ऐंठ सकती हो, अपाहिज मां को कुरसी से गिरा कर तुम बेहुदा गाने गा सकती हो—तुम क्लब में क्या करती होगी, यह मुझे मालूम नहीं. लेकिन आज से तुम्हारा क्लब जाना बंद. मैं डाक्टर फीरोज को बुलाता हूं. अगर बिना गोली के तुम जिंदा और बाहोश नहीं रखी जा सकी, तो मुझे तुम्हारे लिए गोली का भी इंतजाम करना होगा."

"ओह, नो, नो, नो!" कहती कहती आयशा उठी और मुंह मोड़कर वहां से दौड़ गई.

गनी साहब ने आया से रियाज शोफर को बुलाने को कहा. जब उसने आकर सलाम बोला, तो उन्होंने कहा, "रियाज! बेबी घर से बाहर नहीं जाएगी. तुम्हें भी हिदायत है और दूसरे आदमियों को भी बोल दो. फिर जाकर डाक्टर फीरोज को बुला कर लाओ."

मगर दो ही मिनिट में बूढ़ा रियाज हांफता हुआ बाहर से लौट कर आया—"हुजूर, आयशा बीबी पहले ही इम्पाला ले कर चली गई हैं!"

गनी साहब का चेहरा क्षण भर को तन गया. फिर बोले, "तुम डौज ले जाओ. वहां भी हो, जैसे भी हो, आयशा को लेकर लौटो. वरना वापस आने की जरूरत नहीं—गो अबे!"

रियाज ने सिर झुकाया और बाहर निकल गया.

(१०)

बूढ़ा शोफर रियाज शहर की गली गली से परिचित था. यही नहीं, वह उन ठिकानों को भी भली प्रकार जानता था, जहां आयशा जाया करती थी. इसी लिए, सब से पहले, उसने उसकी सहेलियों के यहां चक्कर लगाने शुरू किए. तीन-चार सहेलियों के यहां घूम कर उसे हाई कोर्ट के जज दीनदयाल जी की लड़की रीटा की याद आई.

जब डौज जज साहब के बंगले के डबल गेट के 'इन' वाले फाटक से अंदर घुस रही थी, ठीक उसी समय इम्पाला 'आउट' वाले फाटक से बाहर निकल रही थी. रियाज उसे नहीं देख सका, हालांकि आयशा ने उसका पिछला हिस्सा गेट के भीतर समाते देख लिया.

"रे डा, मेरा पीछा किया जा रहा है! मेरा ख्याल है रियाज ही होगा. मैं उस कैदखाने में वापस नहीं जाऊंगी, चाहे मुझे शहर छोड़ना पड़े.

"डैम इट! मैं कोई बच्ची नहीं हूं. वी आर फ्रेंड्स एंड वी विल डाई हैंड इन हैंड. इट विल बी क्वाइट फन एडवेंचर. (हम दोनों दोस्त हैं, और दोस्तों की तरह हाथ में हाथ डाले ही मृत्यु का स्वागत करेंगे—यह भी खासा हंगामा रहेगा.)"

"तो फिर ठीक है. अब निकाल उसे—एक मुझे दे और एक तू ले ले. फिर हम होंगी और हमारी यह इम्पाला."

"लेकिन ड्राइव करेगी तू उसे लेकर?" आंखें फाड़ कर रीटा ने पूछा.

"बस, निकल गया दम इतने में ही! अरे, तू एक ही लेकर आउट हो जाती है. मैं दो लेकर भी डांस करती हूं. पर मैं तुझे सही-सलामत वापस घर पहुंचा दूंगी. इसी लिए तो एक ले रही हूं."

"आल राइट, डार्लिंग," कहकर रीटा ने अपना पर्स खोला और उसमें से एक शीशी निकाली. उसमें पांच गोलियां बाकी थीं. एक उसने आयशा को दी और दूसरी स्वयं निगल ली. फिर बोली, "चलो, शहर के बाहर चलें. आज सारे दिन की तफरीह रहेगी. रविवार है ही. जब शाम हो जाएगी, तो क्लब में चलेंगे. रास्ते में क्वालिटी से लंच-पैक्स लिये लेते हैं."

इसके बाद इम्पाला ने एक तेज झटका आगे की ओर लिया और हवा से बातें करने लगी. आयशा खासी ड्राइवर थी. वह अक्सर ही रियाज को अलग बैठाकर स्टीयरिंग खुद संभाल लेती थी. रियाज रनिंग कमेंटरी की तरह बोलता जाता था और उसे ड्राइविंग की बारीकियां समझाता जाता था—"दूर से जज करो कि सड़क पार करने वाला आदमी ठिठक कर ठीक तुम्हारे पहियों के नीचे तो नहीं आ जाएगा. ड्राइवर को लोगों का करेक्टर पहचानना चाहिए—और वह भी देखते ही, पहली नजर में. अगर कोई गाड़ी खड़ी हो और तुम्हारी गाड़ी सर्र से बराबर से निकलने वाली हो, तो दस गज दूर रहते उसके अगले पहियों के बीच नजर डालो—हो सकता है कोई बदकिस्मत मरने के लिए, बिना सोचे-समझे, गाड़ी की आड़ से सड़क पर भागा चला आ रहा हो. जिनके पास गाड़ी नहीं, उन्हें गाड़ी की सेंस रखने की कोई जरूरत नहीं. जरूरत तुम्हें है, क्योंकि डाक्टर ने तुम्हारे नुस्खे में गाड़ी लिख रखी है! . . ."

उसकी बातें ऐसी ही मजेदार हुआ करती थीं. आयशा को अब हर चीज का ध्यान सिर्फ अंतर्चेतना से रहता था. सड़क किनारे खड़े पेड़ का पत्ता हिला कि आयशा का हाथ स्टीयरिंग को पूरा का पूरा मोड़ देने के लिए तैयार.

शैवरलैट को चकमा देने के लिए आयशा ने इम्पाला को कितने ही घुमघुमौवा रास्तों से घुमाकर क्वालिटी की बराबर वाली गली में ले जाकर खड़ा किया.

"जल्दी लेकर आ लंच-पैक्स!"

रीटा नौजवान छोकरों की तरह कूदती-फांदती सड़क पर पहुंची और झट से क्वालिटी में घुस गई. दो मिनिट बाद जब वह लंच पैक्स लेकर लौटी, तो हांफ रही थी. उसने अंदर पैक्स फेंके और दरवाजा खोलकर मानो भीतर गिर ही पड़ी. फिर दरवाजा बंद करते हुए फुसफुसा कर बोली—"आयशा, वह बुड्ढा अभी अभी दूसरे दरवाजे से क्वालिटी में घुसा है. डौज गाड़ी बाहर खड़ी है. हमें वापस लौटना भी उधर को ही है—अब क्या होगा?"

आयशा कुछ नहीं बोली. उसने तेजी के साथ इम्पाला को बैक किया और सीधी गाड़ी की गति से ही गली से बाहर निकल गई. फिर स्टीयरिंग दाएं को घुमाया. गाड़ी फिर जबरदस्ती झटका खाकर आगे को बढ़ी. जब वह डौज के बराबर से गुजर रही थी, तो क्वालिटी के अंदर से बूढ़ा रियाज हाथ उठा-उठाकर चिल्ला रहा था—"बीबी जी, बीबी जी!"

मुंह ऊंचा कर के आयशा ठहाका लगा कर हंसी : "अब मास्टर और प्यूपिल का रेस होगा– देखें कौन जीतता है!"

"अहा, खूब मजा आएगा!" रीटा दोनों हथेलियां पीटते हुए बोली. "देख, होशियारी से चलाना. मैं एक्सीडेंट में मरना नहीं चाहती."

"मैं भी—" और मानो प्रमाण-स्वरूप आयशा ने एक्सीलरेटर पर अपने दाएं पैर के पंजे का दबाव बढ़ाना शुरू कर दिया. सामने चौराहे की ट्रैफिक लाइट अभी अभी लाल हुई थी. इम्पाला सारे रुके हुए ट्रैफिक को पार करती हुई साफ निकल गई—और उसके पीछे पीछे डौज! एक बस और बैगार्ड के टायर इस बुरी तरह चीखे कि मानो एक्सीडेंट ही हो गया हो. चौराहे का सिपाही पीछे नंबर नोट करता ही रह गया.

रियाज सिर्फ इस चौराहे से डर रहा था. अब उसे निश्चय था कि वह आयशा बीबी को रेस में पछाड़ देगा. लेकिन जल्दी ही उसे मालूम हो गया कि या तो वह पागल है, या आयशा बीबी जी पागल हो गई हैं!

जल्दी ही कारें कैंटोन्मेंट एरिया से निकलकर सीधी-सपाट सड़क पर पहुंच गईं. इसके बाद हवा में और उनमें मानो होड़ लग गई. रीटा हथेलियां बजाती जा रही थी.

"स्पीड बढ़ा, आयशा! स्पीड बढ़ा! अरी, तेरे पैर से एक्सीलरेटर दबता भी है या नहीं?"

आयशा को यह भी देखने की फुरसत नहीं थी कि पीछे आने वाले बूढ़े रियाज का क्या हाल है. उसकी आंखों को केवल इस बात का आभास था कि रियर-व्यू मिरर में डौज की आकृति मानो चिपक कर रह गई थी. रियाज बराबर फासला कायम रखे हुए था. आयशा ने एक बार फिर होंठ भींचे और स्पीडोमीटर की सुई १३५ किलोमीटर के ऊपर मंडराने लगी. लेकिन मिरर के ऊपर से डौज की आकृति दूर नहीं हुई.

फिर जाने उसके मन में क्या आई कि उसने धीरे धीरे एक्सीलरेटर का दबाव कम करना शुरू कर दिया. ठीक उसी समय सामने से आती एक मालगाड़ी ट्रक इस तरह सटकर निकली कि इम्पाला का ड्राइविंग-डोर हैंडिल उसी के साथ लगा चला गया. आयशा की आंखें चमकीं और रीटा खिलखिला कर हंसी.

"ओ री आयशा! तेरी इम्पाला का दम खिसका जा रहा है —!"

एक खीझभरी हंसी की आवाज रीटा को सुनाई दी. कार की स्पीड अब साठ किलोमीटर तक आ गई थी. मिरर पर डौज अब भी ज्यों की त्यों टंगी हुई थी.

"वह हमें बाई-पास करना नहीं चाहता, रीटा. वह हमारा 'कम्पेनियन' बने रहना चाहता है. दिस इज बैड (यह बुरी बात है)! आल राइट. आई विल हैंडिल हिम. (मैं भुगतूंगी उसे.)"

उसने ड्राइव करते करते बराबर में रखे अपने पर्स में हाथ दिया. रीटा ने देखा कि उसके हाथ में एक छोटी-सी सोने की पालिश की हुई पिस्तौल थी. हालांकि आयशा का हाथ छोटा-सा ही था. लेकिन वह उसकी हथेली में पूरी समा सकती थी. मोटाई में वह आधे इंच से ज्यादा नहीं थी.

"डील वी मर्डर सम वन? (क्या हम किसी की हत्या करने जा रहे हैं?)" रीटा ने आंखें फाड़कर पूछा.

"देखना मैं क्या करती हूं," कहती हुई आयशा ने इम्पाला को साइड पर लिया और ब्रेक लगा कर उसे एकदम डैड-स्टाप कर दिया. पीछे से आती डौज ने इस बार मिरर का साथ छोड़ दिया और आगे बढ़ती नजर आई. इम्पाला से कुछ दूर पीछे तक आकर वह रुक गई.

पिस्तौल हथेली में छिपाए आयशा कार से बाहर निकली. रीटा दूसरी ओर के दरवाजे से बाहर निकल गई. घूमकर वह भी आयशा के बराबर आ गई. दोनों की आंखों में चमक थी, होंठ दबे हुए थे, और दोनों मिलिटरी-कोर की सदस्याओं की तरह मार्च करती हुई डौज की ओर बढ़ रही थीं. (क्रमशः)

स्टेनगन की गोलियों से छिदी हुई राम और श्याम जैसी दो आकृतियां आप को याद होंगी– लेकिन राम और श्याम की असली आकृतियों का कमाल देखिए अगले अंक में.

१० नरुल्ला बिल्डिंग, २१ वां रास्ता, चेंबूर, बंबई-७१

एक

कहानी

जांच-पड़ताल की

ताऊजी पर

बच्चो, आज मैं तुम्हें एक दैनिक समाचार-पत्र की कहानी सुनाऊंगा. वह अखबार में बड़े-बड़े अक्षरों में इस तरह छपी थी :

- 'ताऊ जी पर भ्रष्टाचार के आरोप'
- 'ताऊ जी ने मुहल्ले में भाई-भतीजावाद को पनपाया'
- 'दूध-गोली-वितरण व खेल-कूद आदि में भेद-भाव रखने वाले ताऊ जी पर जांच कमेटी बैठाई गई. डंका मौसी को जांच कमेटी की एक मात्र सदस्या चुना गया'

इसी अखबार में फिर एक ओर ताऊ जी का परिचय इस प्रकार था :

ताऊ जी इस मुहल्ले के सबसे पुराने आदमी हैं और सफाई दरोगा के पद से रिटायर होकर अब मैदान-मुहल्ले, घर-आंगन में गंदगी को देखकर भाषण झाड़ते हैं. ताऊ जी कैसे और कब से ताऊ कहलाने लगे, खुद ताऊ जी को भी याद नहीं. ताऊ जी के पांच बेटे हैं. हथेली की पांच उंगलियों की तरह सभी बेटों को ताऊ जी ने हमेशा अपने साथ रखा और आज भी मुट्ठी में बांधे रखते हैं. सभी बेटों के कुल मिलाकर बाईस बच्चे हैं. सब एक ही बड़ी हवेली में रहते हैं. कभी यह हवेली 'ताऊ की हवेली' कहलाती थी. आजादी के बाद हर चीज के नाम बदलने की जो हवा चली, तो 'ताऊ की हवेली' 'फौज की हवेली' हो गई. मुहल्ले के अधिकांश बच्चे भी यहीं खेलने को इकट्ठे हो जाते हैं. अतः बच्चों के झगड़ों को निपटाने के लिए निठल्ले ताऊ जी कभी जज बन जाते हैं, तो कभी सरपंच. कभी बच्चों से अपना उल्लू सीधा करने वाले नेता बन जाएंगे, तो कभी इस फौज के कमांडर.

इसी तरह अखबार के एक दूसरे कॉलम में जांच कमेटी की सदस्या डंका मौसी का परिचय भी विस्तार से दिया हुआ था :

डंका मौसी अकेली हैं. न आगे पूत न पीछे भूत. अपना सात फुट लंबा शरीर लिये अपनी पांच भैंसों के बीच जब मौसी चलती हैं, तो दूर से दिखाई दे जाती हैं. मौसी भैंसों को अपने बच्चों की तरह पालती हैं. दूध निकालती हैं और बेचती हैं. न दूध में पानी मिलाती हैं और न पानी में दूध. इसी एक ईमानदारी के कारण सारे मुहल्ले में डंका मौसी का डंका बजता है. बच्चा बच्चा मौसी को सलाम बजाता है, तो डंका मौसी को भी बच्चों से उतना ही प्यार है जितना अपनी भैंसों, बछड़ों और उनके पोमठों से.

कोई बच्चा दूध लेने आए, तो आधी लुटिया उसको ज्यादा देते हुए मौसी कहेंगी— 'यह तेरे लिए है, ले पकौड़े'. किसी को टमाटर कहेंगी, तो किसी को काजू किशमिश. किसी को मैमना कहेंगी, तो किसी को कबूतर.

इन्हीं सब कारणों से ही मौसी को, ताऊ जी के भ्रष्टाचार केस की जांच करने का काम सौंपा गया.

जंग आयोग

—मनोहर वर्मा—

ताऊ जी का जो केस बना है वह सुनाने से पहले तुम्हें एक बात और बता दूं (जो इस मुहल्ले के लोगों का कहना है) कि अगर चुनाव में—चाहे वे आम चुनाव हों या सम्भावित चुनाव—ताऊ जी और डंका मौसी दोनों खड़े हो जाएं, तो निश्चय ही ताऊ जी को अपनी जमानत जब्त होने से बचाना मुश्किल हो जाए.

हमारे संवाददाता को ज्ञात हुआ है कि ताऊ जी ने अपने बाईस नाती-पोतों को लेकर एक क्लब खोला. पच्चीस पैसा प्रति बच्चा चंदा जमा किया. बाहर के, यानी मुहल्ले के भी कई बच्चे सदस्य बन गए, क्योंकि क्रिकेट का सामान लाया जा रहा था और बच्चों को क्रिकेट से प्यार था. कुल मिलाकर ताऊ जी के पास पैंतीस रुपये के लगभग जमा हुए बताते हैं.

सारा सामान जुट जाने के बाद खूब खेल जमने लगा. क्लब और बच्चों की बात फास्ट बैंड की तरह डंका

मौसी के कानों तक पहुंची, तो उन्होंने हर इतवार को बच्चों के लिए दो किलो दूध देने व हर हफ्ते एक रुपये की मीठी गोलियां बांटने की घोषणा कर दी.

तीन-चार इतवार बीतते न बीतते बच्चों ने ताऊ जी के खिलाफ एक पत्र लिखा, जिसमें उनपर भ्रष्टाचार और भाई-भतीजावाद के कई आरोप थे.

ऐसा कहा जाता है कि डंका मौसी ने यह पत्र मुहल्ले के चंद नामी-गरामी लोगों को बताया. शिकायत करने वाले बच्चों ने हमारे संवाददाता के पूछने पर कि 'आप लोग चाहते क्या हैं?' एक स्वर में कहा कि 'हम चाहते हैं कि ताऊ जी के भ्रष्टाचार और भाई-भतीजावाद की जांच के लिए तुरंत एक कमेटी बैठाई जाए.' बच्चों ने बड़ी दृढ़ता के साथ कहा बताते हैं कि इस भ्रष्टाचार को रोका जाना जरूरी है, नहीं तो यह मुहल्ले से बढ़कर शहर में और शहर से चलकर देश भर में फैलेगा. भ्रष्टाचार को पनपने देना देश के लिए सबसे बड़ा खतरा है.

बच्चों ने इस दमदार दलील की गेंद को ताऊ जी के आंगन में सही ठिकाने खिलाया है. और अब, जब कि डंका मौसी मैदान में जांच आयोग की सदस्या के रूप में आ खड़ी हुई हैं, तो बच्चे यह देखने को उत्सुक हैं कि ताऊ जी बच्चों की फेंकी हुई गेंद पर चौका मारते हैं या 'क्लीन बोल्ड' होते हैं.

●

हमारे संवाददाता ने बच्चों से मिलकर ताऊ जी पर लगाए गए आरोपों की जानकारी भी प्राप्त की है. वे इस प्रकार हैं :

१– ताऊ जी ने अपने सभी नाती-पोतों से चंदा नहीं लिया है, फिर भी वे क्लब में खेलते हैं और क्लब के सदस्य बने हुए हैं.

२– ताऊ जी खेल के सामान को अपनी मर्जी से निकालते और रख देते हैं, जब कि सामान पर सभी सदस्य बच्चों का समान अधिकार है.

३– ताऊ जी ने क्रिकेट का सामान सैकेंड हैंड खरीदा है और बच्चों से रोज कहते हैं कि 'देखो सारा सामान नया है, संभाल कर खेलना.'

४– हर खेल में चांस पहले अपने नाती-पोतों को देते हैं और वे अपना चांस लेकर भाग जाते हैं, बॉल नहीं देते. इस बात को प्रोत्साहन देकर भी ताऊ जी ने क्लब में भाई-भतीजावाद फैलाया.

५– जिस दिन से दूध बंटने लगा है ताऊ जी हमेशा अपनी ही थैली के चट्टे-बट्टे को पहले दूध बांटते हैं. हर दो पोतों के बाद एक बाहर के बच्चे को लेते हैं. उन्होंने अपनी फौज को लाइन में खड़े होने का यही गुर सिखा रखा है.

६– गोलियां बांटने में भी अपनी छटंकियों को दो-दो, बाकी सबको एक-एक गोली देते हैं. बीच बीच में खुद भी खाते जाते हैं.

७– रेफरी बनते हैं, तो हमेशा दुर्भावना रखते हैं और अक्सर पाइंट अपने पोतों को दे देते हैं.

८– ताऊ जी को जब भी बच्चों के आपसी झगड़ों का न्याय करने को कहा गया है तभी उन्होंने फैसला अक्सर अपने खानदान की तरफदारी करते हुए ही दिया. कभी इनके नाती-पोतों का कसूर पकड़ा भी जाता है, तो उन्हें साधारण डांट-फटकार कर छोड़ देते हैं, जबकि दूसरे लड़कों को खेल से बाहर कर दिया जाता है या उनकी दूध-गोलियां बंद कर दी जाती हैं.

९– ताऊ जी ने पैसों में गबन किया है, अपने नाती-पोतों को लेकर भाई-भतीजावाद फैलाया है और खेल की मूल भावना की हत्या की है.

●

जांच कमेटी ने जो रिपोर्ट पेश की वह यों है :

जांच आयोग ने ताऊ जी के बाईस अधभरों के बयान लिये. उससे पता चला कि ताऊ जी के जो नाती-पोते बच्चे थे अर्थात् जिनकी 'कच्ची कौड़ी' थी वे मुफ्त में ही खेलते-खाते रहे. ताऊ जी पर आरोप सही है. ताऊ जी ने चंद छोटे बच्चों के साथ रियायत की है.

ताऊ जी ने अपनी सफाई देते हुए कहा —'छोटों का हमेशा ही ध्यान रखना चाहिए. क्लब में कुछ ये नन्हे-मुन्ने अल्पसंख्यक बच्चे हैं इनको विशेष रियायतें देना आवश्यक समझता हूं.'

आयोग का कहना है कि ताऊ जी का यह कथन केवल नेताओं के भाषण की तरह है. उनकी कथनी और करनी की जांच के लिए एक अलग से आयोग बैठाया जाए. . .

दूसरे आरोप के बारे में लगभग सभी बच्चों ने अपने बयान में इस बात को सही बतलाया कि ताऊ जी अपनी मरजी से खेल का सामान निकालते और रखते थे और अपने बड़े होने का नाजायज फायदा उठाते हैं.

'मैं ऐसा बच्चों के हित को ध्यान में रखकर करता हूं.' ताऊ जी ने अपनी सफाई में डंका मौसी को बताया. उन्होंने कहा कि 'दिन भर खेलना न केवल बच्चों की पढ़ाई को नुकसान पहुंचाता है, बल्कि दिन भर खेल में रहकर बच्चे घर में मां-बाप को कामकाज में मदद नहीं कर पाते.'

जांच आयोग ने ताऊ जी के इस बरताव को स्वार्थपूर्ण बताते हुए कहा कि ताऊजी ने अपने उसूलों को बच्चों पर जबरदस्ती थोपने की कोशिश की है.

तीसरे आरोप के उत्तर में ताऊ जी ने अपनी सफाई पेश करते हुए स्वीकार किया कि क्रिकेट का सामान सैकेंड हैंड जरूर था, पर उसकी कंडीशन थी हालत नई जैसी ही थी. ऐसा उन्होंने क्लब का पैसा बचाने के उद्देश्य से किया. अभ्यास के लिए एकदम नए सामान की आवश्यकता भी नहीं होती.

जांच आयोग ने बताया कि ताऊ जी ने बच्चों को अंधकार में रखा है. उन्हें यह बात स्वयं बच्चों को भी

स्पष्टत: बतानी चाहिए थी. अगर ताऊ जी ऐसा करते, तो बच्चों के सामने वह झूठे न बनते, बल्कि बच्चों का उनपर विश्वास ही बनता. भविष्य में ताऊ जी बच्चों से सचाई को छिपाएं नहीं. रही बात अभ्यास के लिए नए सामान की जरूरत न होने की, तो इसपर आयोग सिफारिश करता है कि किसी खेल-विशेषज्ञ को पूछा जाना चाहिए.

चौथे आरोप के उत्तर में ताऊ जी ने बच्चों पर उल्टा आरोप लगाते हुए कहा कि 'आजकल बच्चे कोई भी काम करने से पहले घूस मांगते हैं. घर में मैं जब भी अपने इन पीली-मोती से कोई काम करने को कहता हूं, तो वे मुझसे पहले यह वचन ले लेते हैं कि आज पहला चांस क्रिकेट में उन्हें देना. . . मुझे अपना वचन निभाना पड़ता है क्योंकि रघुकुल रीति सदा चली आई, प्राण जाएं पर वचन न जाई.'

डंका मौसी ने इसपर प्रश्न किया कि ऐसा कौन-सा काम है जिसके कारण आपको बच्चों के आगे घुस देने के लिए झुकना पड़ता है? आयोग यह मानता है कि घूस गलत काम के लिए ही दी जाती है. आप आयोग के सामने वे काम बताएं. . .

'मुझे डाक्टरों ने मीठा खाने को बिल्कुल मना किया हुआ है. यहां तक कहा हुआ है कि आप मीठे से वैसे ही नफरत करिए जैसे 'छीछी' से करते हैं. लेकिन एक साधारण मजदूर भी दिन भर कड़ी मेहनत करके दो तोला गुड़ मुंह में डाल लेता है, जिससे थकान उतरे और चित्त में उत्साह बढ़े. मैं भी मीठा खाए बिना नहीं रह सकता. आसपास के सब हलवाइयों को मेरे बेटों ने मना किया हुआ है. मुझे मजबूर होकर चुपचाप इन बच्चों से ही मिठाई मंगानी पड़ती है. घर में आई मिठाई प्राप्त करने के लिए भी मुझे बच्चों का ही सहारा लेना पड़ता है. क्या करूं बूढ़ों की लाठी ये बच्चे ही होते हैं. . . और हां, तंबाकू का पान खाए बिना भी मैं बाल-जनता की कुछ सेवा नहीं कर सकता.'

'लेकिन आपके ये अबोध अपना चांस लेकर भाग भी तो जाते हैं. आपने ऐसे बच्चों को कभी सजा दी?' डंका मौसी ने प्रश्न किया.

'नहीं, मैं उन्हें कोई सजा नहीं दे पाता. क्योंकि बच्चे तुरंत दल बदल लेते हैं, अर्थात् चांस लेने तक तो मुझसे जुड़े रहते हैं. और जैसे ही मैंने उन्हें कोई सजा देने की कोशिश की कि बस सारे अबोध एक तरफ, बूढ़ा ताऊ एक तरफ. अशांतिपूर्ण स्थितियां न पैदा हों इसलिए इन मुसीबत के बंदों को. . .'

'आप अपनी बुरी आदतों, कमजोरियों व स्वार्थ सिद्ध करने के लिए गलत काम सिखाते हैं. उनकी प्रतिभा को गलत दिशा में प्रोत्साहन देते हैं. . . भाई-भतीजावाद फैलाते हैं. यह सब बच्चों को बिगाड़ने की एक बड़ी योजना है. आयोग सिफारिश करता है कि आपकी इन हरकतों से बच्चों को सावधान करने के लिए एक

(शेष पृष्ठ ७३ पर)

प्रति मास नए पुरस्कार

बच्चो, इस अंक की कहानियां ध्यान से पढ़ो और हमें २० अगस्त तक लिखो कि अपनी पसंद के विचार से कौन-कौन सी कहानी तुम पहले, दूसरे तीसरे आदि नंबरों पर रखोगे. लेकिन तुम्हें इस बार सिर्फ उन कहानियों पर अपनी पसंद बतानी है, जिनका उल्लेख 'अतापता' में अन्य 'सरस कहानियां' के अंतर्गत आया है. जिन बच्चों की पसंद का क्रम बहुमत के क्रम से अधिकतम मेल खाता हुआ निकलेगा, उन्हें हम सुंदर सुंदर पुस्तकें पुरस्कार में भेजेंगे.

बाल पाठकों के द्वारा इस तरह इस अंक की जो कहानी सर्वश्रेष्ठ ठहरेगी, उसके लेखक को भी ५० रुपये का एक अतिरिक्त पुरस्कार प्रदान किया जाएगा. अपनी पसंद एकदम अलग कार्ड पर लिखो. पता यह लिखो : संपादक, **(हमारी पसंद–३०) पो. आ. बा. नं. २१३, टाइम्स आफ इंडिया, बंबई-१.**

प्रतियोगिता नं. २७ का परिणाम

इस प्रतियोगिता में सर्वशुद्ध हल किसी भी बच्चे का नहीं आया. जिन पांच बच्चों के हल बहुमत से मेल खाते हुए (दो अशुद्धियां) आए, उनके नाम और पते नीचे दिये जा रहे हैं. इन बच्चों को शीघ्र ही पुरस्कार भेजे जाएंगे :

- **प्रदीपकुमार श्रीवास्तव, द्वारा श्री गौरीशंकरलाल श्रीवास्तव, बी २१ / ५२, कमच्छा, वाराणसी (उ. प्र.).**
- **महेंद्रप्रतापसिंह, द्वारा श्रीराम रामलखनसिंह, ठेकेदार, कदम कुआं, पटना-३.**
- **रतनमोहन सेठ, द्वारा डा. ललितमोहन सेठ, ११७/४९ सर्वोदय नगर, अच्छा-बच्चा अस्पताल, कानपुर-५.**
- **वीरेंद्रकुमार, विश्वंभर सहाय सुरेंद्रकुमार, अनाजमंडी, रुड़की (उ. प्र.).**
- **सीताराम कपूर, १२८८/८९ श्री नगर पो. आ. गनेशपुरा, दिल्ली-३५.**

मई अंक की कहानियों का सर्वाधिक लोकप्रिय क्रम इस प्रकार है :

१– आंसुओं का घड़ा. २– इज्जत की चोरी. ३– भूतों का इंस्पैक्टर. ४– मनोज गुम होता है. ५– अपनी खोज करो. ६– कान पकड़ती हूं. ७– चतुराई. ८– आ तलैये मुझे काट. ९– मेंढकों का राजा.

'आंसुओं का घड़ा' शीर्षक कहानी के लेखक श्री मंगलराम मिश्र को ५० रुपये का अतिरिक्त पुरस्कार प्रदान किया जाएगा.

घर में दाखिल हुई, तो टेलीफोन की घंटी इस बुरी तरह चीख रही थी कि मेरे हाथ-पांव फूल गए.

"आती हूं, बाबा!" मैंने टेलीफोन को डांटा. मगर तौबा करो, कहीं टेलीफोन भी सुना करते हैं!

"हलो, मैं चंद्रा बोल रही हूं," टेलीफोन चुप हुआ, तो दूसरी तरफ से आवाज आई.

"क्यों, क्या बात है? सैरियत तो है?" मैंने पूछा.

"सैरियत होती, तो तुम्हें क्यों तकलीफ देती. तोषी . . ." उनकी आवाज भर्रा गई.

"अच्छा तो है तोषी?"

"हां, वैसे तो अच्छा-भला है. . . देखो, मैंने गाड़ी भेजी है. तुम फौरन आ जाओ."

●

मैं जो चंद्रा के यहां पहुंची, तो वह सचमुच रोई-सी बैठी थीं.

"वैसे सेहत तो अच्छी है?" मैंने जाते ही उनसे सवाल किया.

एक गुलगुली कहानी

गुनाह के कीड़े

"शहर भर के मशहूर और माहिर डाक्टर बुला चुकी हूं. सब यही कहते हैं बिल्कुल तंदुरुस्त है. तीन दफा एक्स-रे कराया. भई, मैं तो सच्ची पागल हो जाऊंगी."

"ऊंह, हो क्या जाओगी, हो ही पागल; ब्याहम-ब्याह का वहम हो गया है!"

तोषी चंद्रा वर्मा का इकलौता बेटा है. उन्होंने उसे जन्म नहीं दिया मगर बड़े प्यार से पाला है. जब उनके यहां अपनी कोई औलाद नहीं हुई, तो उन्होंने उसे गोद ले लिया. मैं, चंद्रा और उनके पति वर्मा जी, आठ साल हुए, उसे 'बाल घर' से लाए थे. उन्होंने उससे कभी यह बात नहीं छुपाई. संतोष को भी इसकी कोई फिक्र न थी कि वह ले-पालक है; क्योंकि जो मुहब्बत उसे मम्मी और डैडी से मिलती थी वह काफी से ज्यादा थी. तोषी मिस्टर और मिसेज वर्मा की आंख का तारा था. दुनिया का शायद ही कोई खिलौना होगा जो उसके पास न था.

मगर कोई हफ्ते-भर से तोषी को न जाने क्या हो गया था; न हंसना न बोलना, न वे प्यारी शरारतें—बस एकदम चुप-सी लग गई थी. चंद्रा, जो उसपर जान छिड़कती थी, सब तरकीबें कर के हार गई, मगर वह दिनोंदिन और ज्यादा उदास और सुस्त होता गया.

"अब एक नई सक सवार हुई है."

"नई सक?"

"हां, कहता है बर्थ-डे नहीं चाहिए. पूछती हूं—बाबा, क्यों? तो चुप. ज्यादा कहो, तो बड़ी आंखों में आंसू. बहन, मेरे बच्चे पर जरूर किसी ने टोना कर दिया है. कितना खिलखिलाता हुआ बच्चा था! अब तो जब देखो, खोई खोई नजरों से घूरा करता है. नजर मिला के तो बात ही नहीं करता."

"कुछ अक्ल काम नहीं करती कि यह भेद क्या है?"

"एक अजीब बात हुई..."

"क्या?"

"परसों स्कूल की छुट्टी के बाद शायद ड्राइवर ढूंढ़-ढूंढ़ के हार गया. जानती हो कहां मिला? 'बाल घर' के सामने!"

"वहां क्या कर रहा था?"

"कुछ भी नहीं. टकटकी लगाए देख रहा था. मैंने बहुत पूछा, तो अपने कमरे में भाग गया."

"शायद 'बाल घर' में उसका कोई दोस्त है."

"ऐं? 'बाल घर' में कोई दोस्त है तो..."

"शायद कोई गरीब बच्चा है, तोषी उसे घर लाते शर्माता है."

"मेरा तोषी ऐसा छिछोरा नहीं. उसके दोस्त अमीर भी हैं गरीब भी. नौकरों के बच्चे बराबर उसके साथ खेलते हैं. न मैंने उन बच्चों को कभी नौकर समझा न तोषी ने."

"शायद गंदा होगा."

"बच्चा गंदा नहीं होता, उसके कपड़े गंदे हो सकते हैं, हाथ-पैर गंदे हो सकते हैं और उन्हें धोया जा सकता है..."

"भाई, अपनी अक्ल तो काम नहीं करती, क्या सोच रही हो?" मैंने उन्हें चिंता में पड़े देखकर पूछा.

"कुछ नहीं, यही कि मेरे तो हवास गुम होते जा रहे हैं. कहीं की कहीं चीज रख देती हूं, फिर ढूंढती फिरती हूं. सुबह दो सौ के नोट निकाले, अब जो नौकर को राशन के लिए रुपये देने को पर्स खोला तो एक नोट है, दूसरा गायब!"

"वर्मा जी या..." मैंने डरते डरते पूछा.

"अरे, वर्मा जी ने नहीं लिये. नोट तो उनके दफ्तर जाने के बाद निकाले थे."

"तब तो तुम्हारे नौकरों की हरकत मालूम होती है."

"कोई नौकर मेरे कमरे में नहीं आता."

"यह जो तुम्हारी नई नौकरानी है, बड़ी खुर्राट मालूम होती है."

"कौन कलावती? अरे नहीं, वह तो बेचारी गाय है. जब तक मैं सामने न बैठूं, कमरा साफ नहीं करती. बहुत डरती है. पिछले मालिकों ने उसपर चोरी का इल्जाम लगाकर बहुत बुरी तरह फंसाया. बड़ी मुश्किल से छूटी. तबसे बड़ी चौकसी हो गई है. दो महीने आए हो गए. आज तक एक पैसा इधर से उधर नहीं हुआ."

"फिर क्या परियां उड़ा ले गईं नोट? नौकरों के सिवा और कौन हो सकता है?"

"...अरे बाबा, कोई नौकर नहीं आया... नोट निकालकर मैंने बटुए में डाले और अखबार देखने लगी. तोषी बटुए से खेल रहा था. मैंने कहा—ना, बेटे, जिप खराब हो जाएगी. इतने में उसकी बस आ गई और वह चला गया. नौकर ने पैसे मांगे. बटुआ खोलती हूं, तो नोट गायब."

"हूं!" मैं सोच में पड़ गई.

"बौखलाई हुई तो रहती हूं. शायद एक ही नोट निकाला और दो का ध्यान रहा. और फिर कोई निकालता, तो दोनों न निकालता, एक काहे को छोड़ देता?"

"इससे पहले भी कभी रुपए गायब हुए?"

"दस-पांच की गड़बड़ हुई होगी या मेरा वहम होगा."

एक निहायत खौफनाक खयाल ने एकदम मेरे दिमाग में फन उठाया. नहीं नहीं, तोषी बहुत छोटा है. अगले हफ्ते वह नौ बरस का होगा. अगर जरा बड़ा होता, तो हो सकता था कि बुरी सोहबत में पड़ गया हो.

"कोई और चीज तो नहीं गई?" मैंने फिर पूछा.

"अरे भई, मुझे याद ही नहीं रहा. कल रात अपनी नीलम की अंगूठी यहीं सामने मेज पर मैंने रखी. जन-आस काट रही थी, शायद लुढ़ककर सोफे के नीचे चली गई. तोषी सोफे पर कूद रहा था..."

मेरा दिल बैठने लगा. जब हम तोषी को 'बाल घर' से लाए थे, तो लोगों ने ऐतराज किया था कि न जाने किस चोर-डाकू की औलाद हो; किसी रिश्तेदार का बच्चा लेना चाहिए. तब हमने यह कहकर ऐतराज करने वालों के मुंह बंद कर दिए थे कि कोई जन्म से चोर नहीं होता, माहौल उसे साहू और चोर बनाता है. मगर अब मेरे दिल में शुबा पैदा हो रहा था, शायद मेरा खयाल गलत था.

"कोई और चीज?"

"नहीं, उस जंजीर और अंगूठी के सिवा तो..."

"अरे, जंजीर भी?"

"हां, तोषी ने उसका हुक टेढ़ा कर दिया था, कहीं गिर पड़ी होगी."

तोषी बटुए से खेल रहा था. नोट गायब.
सोफे पर कूद रहा था. अंगूठी गायब.
जंजीर का हुक टेढ़ा कर दिया. जंजीर गायब.

मगर मैंने चंदा से नहीं कहा. वह और बौखला जाती. तोषी के नाम के साथ चोरी का शब्द जोड़ते मुझे भी दुःख हो रहा था. यह चोरी थी भी नहीं. बचपन

— इस्मत चुग़ताई —

की कोई अदा होगी. छिपा के रख दी होंगी सब चीजें, एक दिन मिल जाएंगी.

"तुम तो कहती हो, तोषी हर वक्त उदास रहता है- फिर यह बटए में खेलना, सोफे पर कूदना?" मैंने पूछा.

"पांच मिनिट के लिए जरा हंसता-लिपटता है, बस फिर एक दम गायब."

"गायब?"

"हां, देखूं तो कमरे में सहमा हुआ बैठा है. मेरा तो डर के मारे दम निकला जा रहा है. भगवान न करे कोई दिमागी बीमारी हुई तो..."

"नहीं जी, कोई ऐसी बीमारी नहीं जिसका इलाज न हो. ज्यादा चिंता न करो..." मैंने समझाया.

इतने में तोषी स्कूल से आ गया. हमेशा वह मुझे देखकर इस बुरी तरह झपटकर हमला करता था कि संभलना मुश्किल हो जाता था, लेकिन आज मुझे देखकर ऐसा अनजान बन गया कि जैसे पहचानता ही नहीं, और भागा अपने कमरे की तरफ. मैंने पुकारा, तो मरे मरे कदमों से आया—खिसियानी हंसी, रोनी सूरत बात का जवाब नदारद, आंखों में आंसू.

●

अंगूठी के बाद चंद्रा जरा चौकन्नी हो गई. उसके बाद कोई चीज गायब नहीं हुई. मगर तोषी की हालत पहले से बदतर हो गई. अब तो वह खाने से भी मुंह मोड़ने लगा. रातों को न जाने क्या डरावना सपना देख कर चीखें मारने लगता—"नहीं नहीं... बाल घर नहीं... मम्मी... डैडी..." वह बहकी बहकी बातें करता. इतना अंदाजा होता था कि 'बाल घर' से तोषी की बीमारी का गहरा संबंध है. मैंने बहुत पूछा-समझाया, मगर तोषी जैसे बहरा हो गया था, पत्थर का हो गया था. और पत्थर में जोंक कहां लगती है!

चंद्रा की हालत खराब थी. लाख समझाया मगर कुछ जो समझी हो. एक दिन कुछ बारिश भी तुली खड़ी थी. चंद्रा ने कहा—रात यहीं सो जाओ, सुबह चली जाना.

उस रात तोषी को देखकर वाकई खौफ आ रहा था. उसने खाना चखा तक नहीं. जबरदस्ती दूध पिलाना चाहा, तो उल्टी करने लगा. आज वह बहुत ही सहमा हुआ था. सोने से पहले तोषी का ही खयाल जी को मसलता रहा.

रात के कोई ग्यारह बजे होंगे कि एकदम जैसे किसी ने मुझे झिंझोड़ कर जगा दिया. दूसरे पलंग पर चंद्रा बेसुध पड़ी थी. घर में कुछ हो रहा था. आहिस्ता से कोई दरवाजा खुला... फिर कोई सीढ़ियों पर से उतरने लगा. एक अनजाना-सा खौफ मेरे दिल को मसोसने लगा. मैंने जल्दी से साड़ी लपेटी और जीने पर जाकर झांका.

मेरी हैरत की कोई हद न रही. जब मैंने देखा तोषी जैसे किसी चुंबकीय शक्ति के असर में नीचे चला जा रहा है. वातावरण में कुछ सिसकियां सुनाई दीं. और वह बाहर निकल गया.

'यह जरूर सोते में चलने की बीमारी का शिकार हो गया है,' मैंने सोचा कि देखूं—कहां जाता है? मैंने उसे पुकारना चाहा मगर फिर रुक गई. अगर इस बीमारी के मरीज को पुकार लो, तो दिमाग को धक्का लग जाने का अंदेशा रहता है. मैं उसके पीछे पीछे चलने लगी. वह अगर मुड़कर देखता, तो निश्चय ही मुझे पकड़ लेता. मगर वह तो सो रहा था. रात बड़ी सुनसान और डरावनी थी. चांद काले काले बादलों में से बड़ी कोशिश से निकलता और काले राक्षस उसे दबोच लेते. मगर वह मुझे नजर आ रहा था. वह उसी तरह खिंचता हुआ खंडहरों की तरफ जा रहा था. गई, बच्चे समझते हैं सिर्फ छोटे ही डरते हैं, बड़े बहुत बहादुर होते हैं, किंतु मेरी सिट्टी-पिट्टी गुम थी और वह बेधड़क जा रहा था. चलते चलते वह एक पत्थर के खंभे के पास रुका, फिर उसने उकड़ूं बैठकर कुछ पत्थर और कूड़ा हटाया.

'अच्छा तो चोरी का माल यहां छिपाया जाता है'—मुझे गुस्सा आने लगा. यह बच्चे का काम नहीं, पेशेवर चोर की हरकत है. कौन जाने वाकई तोषी चोर का बच्चा हो! तब तो इसे वापस ही कर देना चाहिए. फट पड़े वह सोना जिससे टूटे कान. ऐसी औलाद से क्या उम्मीद करें. न जाने बड़ा होकर क्या गुल खिलाएगा.

उसने फिर अपने खजाने पर पत्थर और कूड़ा डाल दिया और तेजी से चला; घर की तरफ नहीं, विरोधी दिशा में. मैंने जल्दी जल्दी पत्थर हटाया, तो यह देखकर मेरी हैरत की कोई हद नहीं रही कि वहां एक टूटी हुई लड़िया की गुड़िया पड़ी है. रुपये-डेढ़-रुपए की होगी, मगर संगमरमर की मालूम होती थी. मेरी कुछ समझ में नहीं आ रहा था—यह क्या किस्सा है. मैंने जल्दी से पत्थर बराबर कर दिए और तोषी के पीछे चली.

चांद फिर हाथ-पैर मारकर बादलों के समंदर से छूट आया था. मैंने देखा सामने 'बाल घर' था. तोषी दरवाजे के सामने खामोश खड़ा था. मैं दीवार से लगी लगी आगे बढ़ी. उसके कंधे लरज रहे थे और सिसकियों से सारा जिस्म कांप रहा था. मेरा जी भर आया. इतने छोटे-से बच्चे को यों अकेला, इतनी रात गए, यों सिसकते देखकर मेरे रोंगटे खड़े हो गए. या खुदा, ये हजारों-लाखों लावारिस बच्चों पर दुःख का पहाड़ टूटता है तो दिलवाले कहां चैन से सोए पड़े रहते हैं. किसी की आंख क्यों नहीं खुलती? वह आगे बढ़ा. मगर इससे पहले कि वह दरवाजा खटखटाता, मैंने उसके कंधे पर हाथ रख दिया. तोषी ने जोर की चीख मारी और बेहोश हो गया.

'बाल घर' का चौकीदार शायद ऊंघ गया था. चीख सुनकर हड़बड़ा के दौड़ा. मैनेजर साहब भी निकल आए. मुझे पहचाना भी नहीं. समझे—कोई औरत बच्चा छोड़ने को आई है. जब बात समझ में आई, तो सवालों की बौछार कर दी. मैंने उनके किसी सवाल का जवाब नहीं दिया. बस टेलीफोन की तलाश में भागी. मेरा संदेश पाकर चंद्रा और वर्मा जी फौरन भागे हुए आए. तोषी होश में आ गया था और बुरी

तरह रो रहा था. न जाने क्या बड़बड़ा रहा था—'बाल घर' नहीं भेजो, मम्मी... 'बाल घर' नहीं."

बड़ी मुश्किलों से सिसकियों के बीच तोषी ने बताया : एक दिन उससे घर की गुड़िया टूट गई, तो कलावती ने उसे डराया कि अब उसकी मम्मी को मालूम होगा, तो वह उसे वापस 'बाल घर' भेज देंगी. वह उनका अपना बच्चा नहीं, बाल घर का बच्चा है, वहीं फिकवा देंगी. लेकिन अगर वह मम्मी-डैडी के पैसे निकाल कर देगा, तो उसका भेद किसी पर नहीं खोलेगी. उसकी हविस बढ़ती गई. अंगूठी और जंजीर के बाद उसने सेफ की चाबी की शर्त लगाई. तोषी ने चाबी भी दे दी मगर फिर उसे बहुत डर लगा. उसने सोचा—अब अगर मम्मी को पता चला, तो वह उसे जरूर बाल घर भेज देंगी; इससे बेहतर है कि वह खुद ही वहां चला जाए.

"बेटे, तुम लाख रुपये का भी नुकसान कर दो, हम तुम्हें अपने से अलग नहीं करेंगे. हमने सौगंध खा कर तुम्हें अपना बेटा बनाया है और तुम, हमेशा हमारे बेटे रहोगे. तुमने छोटा-सा एक झूठ बोला, गुड़िया तोड़ कर छिपा दी. इस झूठ के लिए और झूठ पैदा हुए. तुम हमें बता देते, तो शायद हम तुम्हें डांटते. बात खत्म हो जाती. तुम इतना दुःख न उठाते. न हमको और तुम्हारी मम्मी को इतना परेशान होना पड़ता," वर्मा जी ने प्यार से तोषी को सीने से लगा लिया. "क्या वक्त है?" फिर वह चौंक पड़े. "बारह बजने वाले हैं. मेरे खयाल में कलावती आज ही सेफ का सफाया करने आएगी. इससे पहले कि हमें चाबी के खोने का पता चले और हम कोई दूसरा इंतजाम करें, वह हाथ जरूर मारेगी..." वर्मा जी टेलीफोन की तरफ बढ़े.

•

दो बज गए, तो हम लोगों को यकीन हो गया कि कलावती को शुबा हो गया, उसने इरादा बदल दिया. हम लोग उठकर जाने ही वाले थे कि दो काले काले साए मुंडेर पर लहराए. सब ने सांस रोक ली. 'धूं' से दरवाजा खुला और कमरे में टार्च की रोशनी आगे बढ़ी और सेफ के ऊपर रुक गई.

'क्लिक!' सेफ का ताला खनका. दूसरे क्षण नोटों की गड्डियां और जेवरों के डिब्बे जेबों में डूबने लगे. तभी खटाक् से कमरे की सारी रोशनियां जगमगा उठीं. एक-दम कमरा पुलिस के सिपाहियों से भर गया.

'क्लिक! क्लिक!' हथकड़ियों के ताले खनके और कलावती के दोनों भाई गिरफ्तार हो गए. वह खुद नहीं आई मगर उन दोनों को भेज दिया.

चंद्रा की आंखों में आंसू थे और होंठों पर मुस्कराहट. तोषी बेसुध उनकी गोद में सो रहा था. और मैं दिल ही दिल में उससे माफी मांग रही थी.

किसी के खून में गुनाह के कीड़े नहीं होते! •

(उर्दू से अनुवाद : लक्ष्मीचंद्र गुप्त)

३ इंडस कोर्ट, ए रोड, चर्चगेट, बंबई-१.

बुद्धूराम— —सुरती

विशेष रूप से अगस्त के 'स्वाधीनता विशेषांक' के लिए

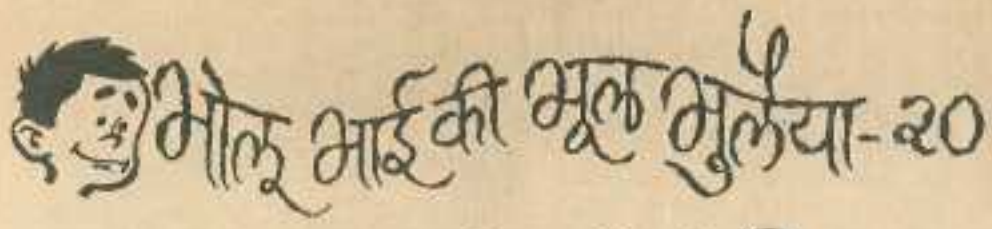

भोलू भाई की भूल भुलैया-२०

सिंगिल सीक्रेट एजेंट नं. लड्डू

भोलू भाई के पंजाब वाले बड़े ताऊ जी कई बार भोलू भाई को जासूसी में दीक्षित करने का वादा कर चुके थे. मगर ताऊ जी को चोरों को पकड़ने से ही फुरसत नहीं थी, और वह बहुत दूर भी रहते थे. इसी बीच किसी ने भोलू भाई को बता दिया कि जासूस बनना आजकल कोई बहुत मार्के की बात नहीं समझी जाती. आजकल सीक्रेट एजेंटों का जमाना है, जो जासूसों के सरताज होते हैं. बस उस दिन से उन्हें यह धुन लग गई कि अब जब भी कोई मार्के का सीक्रेट एजेंट मिलेगा, उसे धर दबोचेंगे, और जब तक वह सीक्रेट एजेंटी में उन्हें दीक्षित नहीं कर लेगा, उसकी नाक नहीं छोड़ेंगे.

इसी बीच एक दिन उन्हें पता चला कि 'पराग' में 'डबल सीक्रेट एजेंट ००१/२' ने अपने पहले ही कारनामे में चारों तरफ धूम मचा दी है. बस, फिर क्या था, एक दिन वह 'पराग' कार्यालय में ही आ धमके, और धड़ाक् से संपादक दादा के कमरे में! कहने लगे, "दादा, अब मैंने निश्चय कर लिया है कि मैं सीक्रेट एजेंट बनूंगा. आप मुझे राम और श्याम से मिलवा दीजिए. बस."

संपादक दादा ने कहा, "लेकिन अगर तुम भी सीक्रेट एजेंट बन गए, तो 'पराग' में छपने वाली तुम्हारी भूलभुलैया का क्या होगा?"

"हां, हां," भोलू भाई प्रसन्न भाव से बोले, "दादा, मैं आपको ऐसी ऐसी भूलभुलैया दूंगा कि आप भी दांतों तले उंगली दबा जाएंगे. डबल सीक्रेट एजेंट राम और श्याम से मेरा सीधा कंपीटीशन होगा, और आपको एक ऐसा उपन्यास मिलेगा कि 'पराग' के पाठक पराग-कार्यालय के सामने धरना देकर बैठ जाएंगे."

संपादक दादा ने अपनी प्यारी दाढ़ी पर हाथ फेरा, और किसी तरह भोलू भाई के इस सिर फिरे खयाल का जवाब देने का विचार कर ही रहे थे कि भोलू भाई की किस्मत से उसी वक्त डबल सीक्रेट एजेंट राम और श्याम ही साक्षात् संपादक दादा के कमरे में क्यों न अवतरित हो जाएं!

इससे पहले कि संपादक दादा उनका असली परिचय छिपाकर उन्हें कमरे में धड़ाक् से घुस आने के लिए डांटते, और इस तरह भोलू भाई को टरका देते, भोलू भाई उछल पड़े और आगे बढ़कर दोनों सीक्रेट एजेंटों से हाथ मिलाते हुए बोले—"मेरा नाम भोलू भाई, और आप लोग हो-न-हो मास्टर राम और श्याम? हः हः ! देखिए, पहचान लिया न?"

संपादक दादा ने राम और श्याम की तरफ क्षमा-याचना की दृष्टि से देखा. छूटते ही राम ने प्रश्न किया, "ओ हो! आप वही भोलू भाई हैं, जिनकी हर समस्या को बेचारे 'पराग' के पाठकों को सुलझाना पड़ता है?"

यह सुनकर भोलू भाई कट गए. अलग हटकर गंभीरता से बोले, "हां, मैं ही 'पराग' के पाठकों का हर बार इम्तहान लेता हूं. जब हर महीने 'पराग' आता है, तो आप लोगों के बचकाने कारनामे पढ़कर मुझे सख्त अफसोस होता है. उनमें जासूसी तो कुछ होती नहीं, बस यूं ही कूद-फांद होती है. सोचा था किसी दिन आप लोग मिले, तो आप लोगों को थोड़ी-बहुत जासूसी सीखने की सलाह दूंगा. मेरे ताऊ जी पंजाब में सी. आई. डी. के बड़े इंस्पेक्टर हैं, और जासूसी मुझे घुट्टी में पिलाई गई थी."

"वंडरफुल!" श्याम ने धीरे से कहा.

"इज इट नॉट?" (है ना?) भोलू भाई ने अकड़कर उत्तर दिया.

"अगर आप जासूसी में इतने ही कारसाज हैं, तो इस बार अपनी ही परीक्षा दे डालें?" राम ने मधुर मुसकान के साथ भोलू भाई से पूछा.

"हालांकि परीक्षा देना मेरी शान के खिलाफ है," भोलू भाई ने कहा, "लेकिन आप लोगों को संतुष्ट करने के लिए मुझे इसमें भी कोई ऐतराज नहीं. बताइए, किस अपराधी को खोज कर लाना है. एक हफ्ते के अंदर अंदर ---"

"अजी, अपराधी को छोड़िए—बेचारा डर के मारे मर ही जाएगा!" राम ने हंसते हुए कहा, "कुरसी पर बैठिए, और शतरंज खेलने से पहले शतरंज के नक्शे बताइए."

सब लोग कुरसियों पर जम गए. भोलू भाई ने कहा, "पूछिए, जी! यह तो चुटकियों के काम हैं मेरे लिए."

राम और श्याम ने मिलकर भोलू भाई के सामने जासूसी के बारे में निम्नलिखित नौ सवाल रखे :

१—अगर दो ऐसे अपराधी पकड़े जाएं, जो जुड़वां पैदा हुए थे, तो उनकी उंगलियों के निशान एक-दूसरे से मिलते हुए होंगे या नहीं?

२—मृत व्यक्ति के साथ हत्यारे को मरणांतक युद्ध करना पड़ा. कुछ चोट भी लग गई, जिससे हत्यारे के खून के कुछ छींटे घटना-स्थल पर पड़े मिले. क्या, जासूस भोलू भाई, उन छींटों से यह पता लगा सकते हैं कि हत्यारा पुरुष था या स्त्री?

३—एक ईसाई व्यक्ति को किसी ने संखिया खिला कर मार डाला. तीन साल बाद इसका संदेह पुलिस को हुआ. उस व्यक्ति की लाश को उसकी कब्र में से खोदकर निकाला गया. क्या लाश के उन अवशेषों से मृत व्यक्ति को तीन साल पहले संखिया खिलाए जाने की पुष्टि हो सकती है?

४—मृत व्यक्ति के शरीर से रिवाल्वर की गोली बरामद हो गई. क्या सिर्फ गोली से यह पता लग सकता है कि रिवाल्वर 'स्मिथ ऐंड वैसन' या 'कोल्ट' में से किस कंपनी का था?

५—मौके-वारदात की शहादतों से लगता था कि सरकस के एक कसरती जवान ने गला घोंटकर आत्म-हत्या कर डाली! क्या यह संभव था?

६—जब मृत शरीर झील में से निकाला गया, तो पता चला कि लाश के फेफड़ों में पानी नहीं भरा था. क्या इस से यह पता चलता है कि हत्या शरीर को पानी में फेंक देने से पहले ही हो गई थी?

७—अभी अभी आपको बरफ के ऊपर संदिग्ध पैरों के निशान मिले हैं. बरफ पिघलने ही वाली है. क्या आप उन निशानों को प्लास्टर में ढाल सकते हैं?

८—मृत व्यक्ति के एक हाथ में हत्यारे के सिर से नोचे हुए बालों की एक गुच्छी है. क्या केवल इस एक सूत्र के सहारे हत्यारे को निश्चित रूप से पहचाना जा सकता है?

९—जिस स्थान पर हत्या हुई थी, वहां एक पिस्तौल पड़ा हुआ मिला. लेकिन उसपर से निर्माता का खोदा हुआ क्रमांक रेती से रेत दिया गया था. क्या उस नंबर का फिर से उद्धार किया जा सकता है?

उत्तर हर प्रश्न का केवल 'हां' या 'नहीं' में देना था. लेकिन प्रश्न सुनकर भोलू भाई की तो सिट्टी-पिट्टी ही गुम हो गई! वह जड़ की तरह बैठे रह गए. उन्हें यह भी पता नहीं चला कि संपादक दादा के साथ राम और श्याम बातचीत करके कब उड़न्छू हो गए!

(देखा, बच्चो, तुमने भी भोलू भाई की तरह सैकड़ों जासूसी किताबें पढ़ी होंगी, लेकिन अब पता चला होगा कि स्वयं जासूस बनना कितनी टेढ़ी खीर है. अगर तुम खम ठोंककर भोलू भाई के सामने प्रस्तुत इन नौ सवालों के जवाब क्रमशः 'हां' या 'नहीं' में दे सको, तो अपने उत्तर एक पोस्ट-कार्ड पर लिखकर, १५ अगस्त तक, नीचे दिया हुआ टोकन चिपका कर भेजो. बिना टोकन चिपके हुए पोस्ट-कार्डों पर विचार नहीं किया जाएगा. जिनके उत्तर सही होंगे उन में से कार्यालय में प्राप्त पहले पच्चीस (अभी राम भजो!) 'पराग' के अक्तूबर अंक में छापे जाएंगे. अपने उत्तर इस पते पर भेजो—भोलूभाई की भूलभुलैया नं. २०, 'पराग', पोस्ट बाक्स नंबर २१३, टाइम्स आफ इंडिया बिल्डिंग, बंबई–१.)

भोलूभाई की भूलभुलैया नं. १८

सही उत्तर और परिणाम

अध्यापक महोदय की आयु ५४ वर्ष थी. उनके पिता जी की आयु ७२ वर्ष और उनके एकमात्र सुपुत्र के विवाह का सन् १९६४ ई.

इस बार भी सही हल भेजने वाले बच्चों की संख्या इतनी अधिक थी कि सभी के नाम छापने संभव नहीं थे. इसलिए पूर्व घोषणा के अनुसार कार्यालय में पहले आए पच्चीस सही कार्ड वाले बच्चों के नाम दिए जा रहे हैं, जो इस प्रकार हैं :

सुनीलकुमार जैन, फाजना; हरदीपसिंह, रोपड़; भरतभूषण बंसल, धरगांव; ओमप्रकाश साबरिया, भीलवाड़ा; संध्या, फरीदाबाद; वैवेंद्र कुमार चोपड़ा, दिल्ली; संजीव उबेराए, नई दिल्ली; आभा कपूर, गाजियाबाद; कृष्णकुमार भाटिया, दिल्ली; राजेशकृष्ण शर्मा, जयपुर; श्रीकृष्ण भगवान, पखौर; स्वप्न बंसल, यमुनानगर; प्रदीपकुमार, अलीगढ़; शांतनु श्रीवास्तव, अलीगढ़; मधु जैन, कोटा; हरीशचंद्र गुप्ता, गाजियाबाद; विनयकुमार सिंह, रोपड़; संगीतारानी, रतलाम; कल्पना जैन, मेरठ शहर; अस्मिता बोरा, गांधीधाम; विनोद दुआ, अजमेर; गोवर्धनलाल राठौड़, जावरा; दीपक बत्रा, फरीदाबाद; सुशीला अग्रवाल, उदयपुर; नरेंद्रकुमार मंडल, यमुनानगर.

कोलगेट से सांस की दुर्गंध रोकिये और दंत-क्षय का दिनभर प्रतिकार कीजिये !

क्यों कि : एक ही बार दांत साफ़ करने पर कोलगेट डेंटल क्रीम मुंह में दुर्गंध और दंत-क्षय पैदा करने वाले ८५प्रतिशत तक रोगाणुओं को दूर कर देता है।

वैज्ञानिक परीक्षणों से यह सिद्ध हो चुका है कि १० में से ७ लोगों के लिए कोलगेट सांस की दुर्गंध को तत्काल खत्म कर देता है, और कोलगेट-विधि से खाना खाने के तुरंत बाद दांत साफ़ करने पर अब पहले से अधिक लोगों का...अधिक दंत-क्षय रुक जाता है। दंत-मंजन के सारे इतिहास की यह बेमिसाल घटना है। केवल कोलगेट के पास यह प्रमाण है।

इसका पिपरमिंट जैसा स्वाद भी कितना बढ़िया है—इसलिए बच्चे भी नियमित रूप से कोलगेट डेंटल क्रीम से दांत साफ़ करना पसंद करते हैं

आप को यदि पाउडर पसंद हो तो कोलगेट टूथ पाउडर से भी ये सभी लाभ मिलेंगे. एक डिब्बा महीनों चलता है।

अब ! सुपर साइज़ खरीदिये ...पैसा बचाइये !

ज़्यादा साफ़ व तरोताज़ा सांस और ज़्यादा सफ़ेद दांतों के लिए...
दुनिया में अधिक लोगों को दूसरे टूथपेस्टों के बजाय कोलगेट ही पसंद है।

DC.G.38 HN

रंग बदलते खरबूजे

पृष्ठ ११ से आगे

नहीं आ सकी थीं. हर बार कोई न कोई खर्च मजबूरी बनकर सामने आ जाता था. पर मम्मी इस तरह के ताने कभी नहीं देती थीं, उनके स्वभाव में ही यह बात नहीं थी. कपड़े वह बड़ी हिफाजत से पहनती थीं. पुरानी से पुरानी साड़ी भी उनपर नई ही लगती.

पता नहीं आज दोनों का मूड क्यों ऑफ था? रास्ते भर कोई कुछ नहीं बोला. हाल में भी सब गुमसुम बैठे रहे. समोसे, कचौरी और आइसक्रीम बेचने वाले बीस बार सामने से निकल गए. उनकी ओर देखने तक का मन नहीं हुआ. सिनेमा छूटते ही बाहर आकर पापा ने पूछा, "कहो, भाई, अब क्या प्रोग्राम है?"

असीम बोला, "घर लौटें, तो कैसा रहे? कम से कम मुझे तो जाने ही दीजिए. डेढ़-सा होम-वर्क करना है."

और कोई दिन होता, तो अतुल चीख-पुकार मचा देता. पर आज उसने कोई प्रतिवाद नहीं किया. घूमने में साफ भी मजा नहीं आ रहा था. मम्मी की खिल-खिलाती हुई और पापा की तिमंजिली हंसी के अभाव में सब फीका फीका लग रहा था.

उस दिन के बाद तो जैसे यह क्रम ही बन गया. जरा जरा-सी बात को लेकर मम्मी-पापा में देर तक चखचख होती रहती. अंत यही होता कि मम्मी आंसू पोंछती हुई काम में जुट जातीं और पापा लाइब्रेरी की कोई किताब लेकर आराम कुर्सी में धंस जाते. रोज शाम ड्राइंग रूम में शतरंज या कैरम की बाजी अब नहीं जमती. खाने की मेज पर न कोई मम्मी को छेड़ता था, न उनकी प्रशंसा के पुल बांधे जाते थे. सुबह सुबह रसोई में मम्मी के सुरीले भजन और बाथ रूम में पापा की बेसुरी तानें अब नहीं गूंजती थीं. घर जैसे घर नहीं था, खाने और सोने की जगह भर था.

जितना संभव था बच्चे अपना समय स्कूल में, दोस्तों के घर या खेल के मैदान में बिताते. घर में घुसते हुए भी डर लगता था कि पता नहीं क्या आलम हो. पढ़ते हुए वे एकाएक रुक जाते. लिखते हुए उनके हाथ थम-से जाते. मौन होकर वे एक दूसरे को ताका करते. अपनी आवाज से भी उन्हें डर-सा लगता था. रेखागणित के प्रश्नों को हल करता हुआ असीम उस दरार के बारे में सोचता, जो अचानक मम्मी-पापा के बीच पड़ गई थी. गुप्तकाल का स्वर्णिम इतिहास याद करते हुए अतुल की आंखों के सामने हंसी-खुशी से भरपूर अपना घर घूम जाता, जो अब अतीत की वस्तु बन गया था.

बच्चे लेकिन थे बड़े समझदार. अपने मन की पीड़ा को किसी पर प्रकट नहीं होने देते थे. इस बार असीम ने अपनी सालगिरह घर पर नहीं मनाई. नाश्ते का सामान लेकर दोस्तों के साथ वह नेहरू पार्क चला गया. अतुल के मित्र योगेश की मौसी आई हुई थीं. योगेश की मम्मी ने कहा कि वह मौसी को लेकर मम्मी से मिलने आएंगी, तो अतुल ने मम्मी की बीमारी का बहाना बनाकर उन्हें रोक दिया. रास्ते में कोई परिचित भी मिलता, तो वे बरसक उससे कतराकर निकल जाते, जिससे घर के बारे में कोई बात न हो.

असीम की परीक्षाएं सिर पर थीं. घर पर दोस्तों के जमघट से बचने के लिए उसने खुद ही एक मित्र के यहां रोज पढ़ने जाना प्रारंभ कर दिया, जिससे घर और भी सूना लगने लगा था. अपने मित्र का घर उसे स्वर्ग के समान लगता और वह सोचता—इनसान चाहे तो थोड़े में भी कितने आनंद से रह सकता है. पर इन बड़ों को कौन समझाए?

उस दिन रात वह ग्यारह बजे घर लौटा, तो एक मित्र भी साथ था. असीम की कैमिस्ट्री की कापी से उसे कुछ ग्राइंट्स लेने थे. दरवाजे पर आते आते ही उसने मम्मी-पापा के कर्कश वार्तालाप को सुना और वह शर्म से लाल हो उठा. दोस्त समझदार था. हाथ दबाकर बोला—"अच्छा, असीम, अब देर हो गई है. कल तुम लेते आना."

असीम का मन क्षोभ से भर उठा. मित्र को विदा देने के बाद भी वह बुत बना दरवाजे पर खड़ा रहा. घर में पांव देना भी उसे जहर मालूम हुआ. पता नहीं कैसे आहट पाकर मम्मी बाहर आईं, तो बोलीं, "अरे, बाहर क्यों खड़ा है? और अतुल आया था न तेरे साथ? क्या वह गया?"

अपमान से असीम की आंखें भर आईं. स्वर में कटुता भरकर वह बोला —"आया तो था, पर आप लोगों की आवाज सुनकर लौट गया." फिर और हिम्मत करके बोला, "कम से कम इतना ध्यान तो रखा कीजिए कि सड़क तक आवाज न पहुंचे."

मम्मी ने कुछ नहीं कहा, तेजी से अपने कमरे की ओर चली गईं. असीम अपने कमरे में लौटने ही वाला था कि मम्मी की खिलखिलाहट और पापा के ठहाकों ने उसे चौंका दिया. अतुल भी कमरे से दौड़ा दौड़ा आया और टकराते टकराते बचा. फिर दोनों दबे पांव एक-दूसरे का हाथ थामे मम्मी के कमरे की ओर गए. देखते क्या हैं:

पापा हंसते जा रहे हैं—"भाई डियर शीला, भई, तुम्हारा जवाब नहीं, वाह! खूब एक्टिंग करती हो! क्या खरबूजों को देखकर खरबूजे की तरह रंग बदला है!"

मम्मी लजाते हुए कह रही थीं—"और आप भी तो कुछ कम नहीं हैं, हाय राम! किस कदर चिल्लाते हैं कि . . .लेकिन अब बस कीजिए जी. बच्चों के सूखे सुर्ख मुंह से नहीं देखे जाते. अभी आप असीम का चेहरा देखते तो. . . बेचारा!"

अतुल ने असीम की ओर देखा—दोनों की आंखें मिलीं. चेहरे मुसकान से भर उठे. फिर असीम ने एका-एक अतुल को गले लगा लिया. ●

१,००० रुपये के नकद इनाम

पराग उद्धरण प्रतियोगिता नं. १०

सर्वशुद्ध या निकटतम पूर्ति पर ७०० रु., न्यूनतम अशुद्धियों पर ३०० रु.

ज्ञानवर्द्धन व मनोरंजन के साथ साथ धन भी

बच्चों और किशोरों के लिए प्रस्तुत यह प्रतियोगिता उनकी अपनी प्रतियोगिता है. थोड़े से श्रम, अध्ययन
और सूझबूझ से आप इस प्रतियोगिता में विजयी हो सकते हैं.
इस प्रतियोगिता के संकेत-वाक्य बच्चों के लिए प्रकाशित पुस्तकों से ही लिये गए हैं. इसलिए जो पाठक सबसे
अधिक पुस्तकें पढ़ते होंगे, उनके लिए खेल खेल में एक हजार रुपये जीतने का यह स्वर्ण अवसर है.
सामने के पृष्ठ पर १२ संकेत-वाक्य दिए गए हैं. प्रत्येक वाक्य में एक शब्द का स्थान डैश लगाकर छोड़ दिया गया
है. उसी पृष्ठ पर एक पूर्ति-कूपन है, जिसमें दो पूर्तियां दी गई हैं. जिस क्रमांक का संकेत-वाक्य है, प्रत्येक पूर्ति में उसी
क्रमांक के आगे दो शब्द दिए गए हैं. उनमें से एक शब्द सही है, और दूसरा गलत. बस, आप गलत शब्द पर × का
निशान लगा दीजिए. देखिए, कितनी सरल, मनोरंजक और उपयोगी है यह प्रतियोगिता!
अब नीचे लिखे नियम ध्यान से पढ़िए :

'पराग उद्धरण प्रतियोगिता' में भाग लेने के नियम और शर्तें

१–एक पूर्ति-कूपन में दो पूर्तियां दी गई हैं, आप एक पूर्ति भरें या दोनों—पूरा कूपन बाहरी रेखाओं पर काटकर
भेजना होगा. पूर्तियां 'पराग' में प्रकाशित पूर्ति-कूपनों पर ही स्वीकार की जाएंगी. यदि आप केवल एक ही पूर्ति भरें, तो
दूसरी पूर्ति को क्रास कर दीजिए, और उसके नीचे पूर्ति क्रमांक आदि कुछ न भरिए.
२–पूरे कूपन की दोनों पूर्तियों का प्रवेश-शुल्क १ रुपया और केवल एक पूर्ति का प्रवेश-शुल्क ५० पैसे है. दोनों में
से किसी भी पूर्ति को आप पहली मान सकते हैं. एक ही नाम से आप चाहे जितनी पूर्तियां भेज सकते हैं. एक ही लिफाफे
में अनेक नामों और परिवारों की पूर्तियां भेजी जा सकती हैं. लिफाफे के अंदर रखी सभी पूर्तियों का सम्मिलित
प्रवेश-शुल्क एक ही पोस्टल आर्डर, मनी आर्डर, या नकद रसीद से भेज सकते हैं. किंतु ऐसी सभी पूर्तियों के नीचे कुल
पूर्तियों की संख्या, उनके क्रमांक, और पूर्ति-कूपन में पोस्टल आर्डर, मनी आर्डर की रसीद, या नकद रसीद का नंबर
लिखना अनिवार्य है. पोस्टल आर्डर, या डाकखाने से मिली मनी आर्डर की रसीद, या नकद रसीद पूर्तियों के साथ
अवश्य नत्थी करके भेजिए. डाक-टिकट या करेंसी नोट प्रवेश-शुल्क के रूप में स्वीकार नहीं किए जाएंगे. आप कार्या-
लय में नकद रुपया जमा करके या डाक-खर्च सहित मनी आर्डर भेजकर ५० पैसे, १, २ व ५ रुपए तक की नकद रसीदें
प्राप्त कर सकते हैं और उन्हें अगले चार महीने तक, प्रवेश-शुल्क के रूप में, पूर्तियों के साथ नत्थी कर सकते हैं.
३–स्थानीय प्रतियोगी अपनी पूर्तियां 'टाइम्स आफ इंडिया भवन' के प्रवेश द्वार पर बनी 'स्थानीय प्रवेश-पेटी' में
डाल सकते हैं. स्थानीय या डाक से आने वाली सभी पूर्तियों के लिफाफों के खुलने वाली तरफ भेजने वाले का पता, तथा
उनके पीछे यह पता लिखा होना चाहिए—'पराग उद्धरण प्रतियोगिता नं. १०', प्रतियोगिता विभाग, पोस्ट बैग नं.
२०७, टाइम्स आफ इंडिया भवन, बंबई–१.' मनी आर्डर फार्मों और रजिस्टरी से भेजे जाने वाले लिफाफों पर 'पोस्ट
बैग नं. २०७' न लिखें. पोस्टल आर्डर क्रास कर दें. उसमें 'पाने वाले' के स्थान पर 'पराग उद्धरण प्रतियोगिता नं. १०'
और 'पोस्ट आफिस' के आगे —'बंबई–१' —लिखें.
४–प्रथम पुरस्कार ७०० रु. उन प्रतियोगियों को मिलेगा, जिनकी पूर्तियों में संकेत-वाक्यों के सही पूरक
शब्दों पर निशान नहीं होंगे, और सभी गलत शब्दों पर निशान लगे होंगे. यदि ऐसी कोई पूर्ति प्राप्त न हुई तो उसके
निकटतम अशुद्धियों वाली पूर्तियों पर प्रथम पुरस्कार दिया जाएगा. द्वितीय पुरस्कार ३०० रु. प्रथम पुरस्कार-
प्राप्त पूर्तियों से निकटतम अशुद्ध पूर्तियों पर प्रदान किया जाएगा. समान अशुद्धियों के एक से अधिक विजेताओं को
घोषित पुरस्कार बराबर बराबर बांटे जाएंगे.
५–अपना नाम और पता प्रत्येक पूर्ति-कूपन पर सुपाठ्य और स्पष्ट अक्षरों में लिखिए. डाक में खो जाने वाली,
विलंब से प्राप्त होने वाली, या गंदी व कटी-फटी पूर्तियां प्रतियोगिता में शामिल नहीं होंगी.
६–सभी पूर्तियां कार्यालय में पहुंचने की अंतिम तिथि सोमवार ११ अगस्त १९६९ ई. है. अपनी पूर्तियां भेजने
के लिए अंतिम तिथि की प्रतीक्षा न कीजिए. निर्धारित अवधि के प्रारंभिक दिनों में ही पूर्तियां भेज देने से आप अनेक
भूलों से बच सकते हैं. सर्वशुद्ध शब्दावली तथा उनसे संबंधित पुस्तकों व पुरस्कार विजेताओं की सूची 'पराग' के
अक्तूबर '६९ के अंक में प्रकाशित की जाएगी.
७–प्रतियोगी को इस प्रतियोगिता से संबंधित प्रत्येक विषय में प्रतियोगिता संपादक का निर्णय अंतिम रूप से मान्य
होगा. वैधानिक रूप से विवादास्पद विषयों में बंबई के न्यायालय को ही निर्णय देने का अधिकार होगा.
८–नियमों के प्रतिकूल तथा पूर्ति-कूपनों में आवश्यक विवरण से रिक्त कोई भी पूर्ति प्रतियोगिता में सम्मिलित
नहीं की जाएगी. 'पराग' तथा संबद्ध प्रकाशनों के कर्मचारियों को इसमें भाग लेने का अधिकार नहीं होगा. ●

'पराग' उद्धरण प्रतियोगिता नं. १० के संकेत-वाक्य

१. अब दोनों के सामने समस्या थी अपनी टोली के बाकी तीनों सदस्यों को——की.

२. "लेकिन यहां कोई—— नहीं है," नन्हे ने मुन्नी को बताया.

३. पांचों ने मिल कर उन्हें—— और जी भर कर अपनी प्यास बुझाई.

४. उसके बाद उसकी कुत्ते के हिस्से की आयु शुरू होती है. इस समय आदमी में वह—— नहीं रहती.

५. "ठहरो, मैं तो उस व्यक्ति से विवाह करूंगी, जो मुझे अपने हाथ से बुन कर——के कपड़े देगा."

६. वह बुढ़िया को वहीं——छोड़ फव्वारे की ओर चल पड़ा.

७. राजकुमारी को—— के किले से बाहर लाया गया और उसे रानी का पद दिया गया, जिस से वह बहुत प्रसन्न हुई.

८. रात भर जोर पानी——रहे और बगीचे की सिंचाई अच्छी तरह हो गई.

९. वास्तव में शब्द—— को चाहे सीधा पढ़ो या उल्टा एक ही नाम का बोध होता है.

१०. "महाराज, मैं आपकी सेवा करने के उद्देश्य से उपस्थित हुआ हूं. यदि आप मुझे—— में रख लेंगे, तो मैं ईमानदारी से अपने कर्तव्य का पालन करूंगा."

११. 'उन्हें डर था कि हम उन्हें सभ्यतापूर्ण व्यवहार करना सिखाएंगी,'—— ने हंसते हुए कहा.

१२. "अच्छा सवाल——, मैं जा रहा हूं और अगले मास इसी तिथि को आने का वायदा करता हूं."

यहां से काटिए

अंतिम तिथि : ११-८-६९

'पराग' उद्धरण प्रतियोगिता नं. १० (पूर्ति-कूपन)

शब्दों के प्रत्येक जोड़े में से जो शब्द आप गलत समझें, उसपर × का चिह्न बना दें. यदि आप केवल एक ही पूर्ति भरें, तो दूसरी पूर्ति को काट कर दें.

१	जगाने	जताने
२	जल	फल
३	तोड़ा	फोड़ा
४	भक्ति	शक्ति
५	खादी	शादी
६	सोता	खोता
७	शीतल	पीतल
८	खींचते	सींचते
९	विकटकवि	विकलकवि
१०	सेना	सेवा
११	चुलबुल	बुलबुल
१२	सरकार	सरदार

१	जगाने	जताने
२	जल	फल
३	तोड़ा	फोड़ा
४	भक्ति	शक्ति
५	खादी	शादी
६	सोता	खोता
७	शीतल	पीतल
८	खींचते	सींचते
९	विकटकवि	विकलकवि
१०	सेना	सेवा
११	चुलबुल	बुलबुल
१२	सरकार	सरदार

पूर्ति क्रमांक : ..... कुल पूर्ति संख्या : ..... पूर्ति क्रमांक : ..... कुल पूर्ति संख्या : .....

इस प्रतियोगिता में भाग लेते हुए मुझे प्रतियोगिता के सभी नियम व शर्तें पूर्णतया स्वीकार हैं.

पूरा नाम (स्याही से) : ______________________

____

____

पोस्टल आर्डर / मनी आर्डर रसीद / नकद रसीद / का नंबर : ....

यहां से काटिए

यहां से काटिए

यहां से काटिए

पिंकी, बबलू, चुन्नू, मुन्नू
सब पढ़ते हैं
चंपक
और तुम?
नया अंक पढ़ कर तो देखो! चंपक की चटपटी कहानियां, नईनई बातें सिखाने वाले लेख, मन लुभा लेने वाली पहेलियां, सूझबूझवाले बहुत से स्तंभ और छक्का देने वाले चीकू के कारनामे तुम्हें भी इतने पसंद आएंगे कि तुम चंपक का हर अंक खरीदे बिना न रह सकोगे!
चंपक
चंपक
चंपक
बच्चों को देवों, दानवों, राक्षसों, जादूटोनों व छलकपट की कहानियों के जहर से बचा कर देशभक्त, साहसी व चरित्रवान बनाने वाली पत्रिका
नमूने की प्रति मुफ्त मंगाने के लिए डाक खर्च के लिए 15 पैसे के डाकटिकट रख कर यह कूपन पोस्ट कर दो :
दिल्ली प्रेस, नई दिल्ली-55 :
चंपक की नमूने की प्रति इस पते पर भेज दीजिए :
नाम :
पता :

'पराग' उद्धरण प्रतियोगिता नं० ८ का परिणाम

१ गलती पर ५ प्रतियोगियों ने प्रथम पुरस्कार जीता

सही उत्तर : १-जानते, २-उठा, ३-बीबी, ४-बेनी, ५-तीन, ६-भट्टी, ७-वाइसों, ८-तप, ९-कटने, १०-सेठ, ११-डाकू, १२-कोढ़.

'पराग' उद्धरण प्रतियोगिता नं. ८ में सर्वशुद्ध हल कोई प्राप्त नहीं हुआ. इसलिए प्रथम पुरस्कार १ गलती पर ५ प्रतियोगियों ने जीता. प्रत्येक को १४० रुपये प्राप्त हुए. इसी प्रकार २ गलतियों पर ३६ प्रतियोगियों को पुरस्कार मिले. इनमें से प्रत्येक प्रतियोगी को ८ रुपये ३४ पैसे प्राप्त होंगे.

अगर आपको पूरा भरोसा है कि आप पुरस्कार के हकदार हैं और आपका नाम पुरस्कार विजेताओं की सूची में नहीं है, तो आप एक अगस्त से पूर्व **प्रतियोगिता संचालक, 'पराग' उद्धरण प्रतियोगिता, पोस्ट बॉक्स नं. २०७, टाइम्स आफ इंडिया भवन, बंबई-१** के पते पर एक पत्र लिखें. उस पत्र में अपनी पूर्ति की अशुद्धियों की संख्या, पोस्टल आर्डर, मनी आर्डर रसीद, या नकद रसीद का नंबर दें. साथ में जांच की फीस के रूप में १ रुपया मनी आर्डर, या पोस्टल आर्डर द्वारा भेजें. यदि आपका दावा सही होगा, तो पुरस्कार की राशि को उसी के अनुसार फिर से वितरित किया जाएगा. **पुरस्कार की राशि अगस्त १९६९ में कार्यालय से भेजी जाएगी.**

१ गलती वाले ५ विजेता : प्रत्येक को १४० रुपये

१-कन्हैयालाल श्रीवास्तव, द्वारा राजेंद्रप्रसाद श्रीवास्तव, प्रोग्राम एक्जीक्यूटिव आफिसर, आल इंडिया रेडियो, जयपुर. २-शाहिद अहमद, मोहसिन मंजिल, नई बाजार (सब्जी मंडी), देवरिया (उ. प्र.). ३-कुमारी जया चटर्जी डी ४८-१२७, मिसिरपोखरा, वाराणसी. ४-मदनमोहन जोशी मक्खनलाल जोशी, दाऊजी का मंदिर, भौमन बड़ोदिया कुमारिया, पोस्ट भौमन बड़ोदिया, जिला शाजापुर (म. प्र.). ५ मनोहरलाल ग्रामनानी, शंकर आयल मिल, रामपुर रोड, हल्द्वानी.

२ गलती वाले ३६ विजेता : प्रत्येक को ८ रुपये ३४ पैसे

१-शरदकुमार मथोरिया, बड़नगर, जिला उज्जैन. २-कु. स्वीटी जोन्स, बंबई. ३-वीरेंद्रसिंह वर्मा, कानपुर औरैया. ४-सुरिंदरचंद्र अबरोल, नई दिल्ली. ५-कुमारी मधु श्रीवास्तवा, कानपुर. ६-एस. विजय कुमार, वाराणसी. ७-संध्या ठाकुर, ग्वालियर. ८-सरिता भटनागर, झींद. ९-प्रेमसिंह 'कड़क', अलवर. १०-अशोककुमार पांडे, भरवारी, जिला इलाहाबाद. ११-अलकनंदाकुमारी सोलंकी, रमेरवाड़ी, सारंगपुर, जिला राजगढ़. १२-कु. अनीता, चुनार. १३-रमेशकुमार, पंवारा, जिला जौनपुर. १४-संजयकुमार अग्रवाल, अलीगढ़. १५-वीरेंद्र-कुमार श्रीवास्तव, खंडवा. १६-राजेंद्रकुमार, सहारनपुर. १७-हरदयालसिंह, थाना. १८-प्रकाशचंद्र श्रीवास्तव, रुड़की. १९-सुरेशकुमार बांठिया, कवर्धा. २०-परमजीतसिंह सनुजा, मैनपुरी. २१-आनंद परमानंद निरंवाणि, बंबई. २२-भूपेन्द्रसिंह पुरी, वाराणसी. २३-अशोकसिंह जादौ, लश्कर (ग्वालियर). २४-इंद्रा त्रिभारिया, फरुखाबाद. २५-शंकर लाल मोमनदास, खंडवा. २६-विनोदकुमार सक्सेना, गोंडा. २७-सुधीर खुराना, दिल्ली. २८-वीना हांडा, नई दिल्ली. २९-दुर्गेशनंदिनी सिन्हा, लखनऊ. ३०-ज्ञान गुरनानी, जबलपुर. ३१-इंद्रादेवी, वाराणसी. ३२-प्रदीपकुमार अग्रवाल, जिला, काशीपुर (नैनीताल). ३३-स्नेहलता बतरा, कानपुर. ३४-राजन अस्थाना, गोंडा. ३५-श्यामसुंदर केवलराम, सिवनी. ३६-दिलीपकुमार टंडन, गोंडा.

इस प्रतियोगिता में जिन पुस्तकों से संकेत वाक्य लिए गए उनका परिचय :

१-सौ सवाल : एक जवाब—ले. प्रभाकर माचवे—राजपाल एंड संस—पृ ४०. २-करामाती कद्दू—ले. द्रोणवीर कोहली—प्र. आत्माराम एंड संस—पृ ४९. ३-कीटाणु और सामान्य रोग—ले. वीरेन्द्र अग्रवाल—प्र. आत्माराम एंड संस—पृ. ४६. ४-राहुल सांकृत्यायन—ले. भदन्त आनंद कौसल्यायन—प्र. पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस—पृ. ५५. ५-सौ सवाल : एक जवाब (विवरण उपर्युक्त) पृ. ४२. ६-करुणा की कहानियां—ले. रामबहादुरसिंह—प्र. राजपाल एंड संस—पृ. ४०. ७-अमृत की धारा—ले. विश्वम्भरसहाय प्रेमी—प्र. शकुन प्रकाशन—पृ. १०. ८-करुणा की कहानियां (विवरण उपर्युक्त)—पृ ५६. ९-करामाती कद्दू (विवरण उपर्युक्त)—पृ ३९. १०-भारत के वीर सपूत—ले. सावित्री देवी वर्मा—प्र. राजपाल एंड संस—पृ. ११९. ११-डाकुओं के घेरे में—ले. रामकुमार 'भ्रमर'—प्र. शकुन प्रकाशन—पृ १९. १२-भारत के वीर सपूत (विवरण उपर्युक्त)—पृ ७९.

मेंढकी को जुकाम

एक बार संगीत-सभा में
गई मेंढकी, झाड़ी शान :
"कोयल से भी कंठ सुरीला,
और मधुर है मेरी तान!"

लेकिन जब माइक पर पहुंची,
घबराई, बोली सिर थाम,
"क्षमा करें, मैं गा न सकूंगी,
अभी अभी हो गया जुकाम!"

—विनोद रस्तोगी

नन्हे-मुन्नों के लिए नए शिशु गीत

पिछले कई वर्षों से पराग में शिशु गीत दिए जा रहे हैं. इन शिशु गीतों के चयन में बड़ी सावधानी बरती जाती है, क्योंकि शुद्ध शिशु गीत लिखना उतना आसान नहीं है, जितना समझा जाता है, इसलिए अच्छे गीत बहुत कम लिखे जाते हैं. ये गीत ऐसे होने चाहिए कि इन्हें चार से छह साल तक के बच्चे आसानी से जबानी याद कर लें और अन्य भाषाभाषी बड़े बच्चे भी इनका आनंद ले सकें. इन से मुहावरेदार हिंदी सरलता से जबान पर चढ़ जाती है.

धम् से नीचे आया!

बिल्ली मौसी खीर पकाए,
चुहिया पूरी बेले,
पास पड़ी खटिया पर बैठा
चूहा खाए केले!

तभी अचानक आया गीदड़,
खीर देख ललचाया,
छिलकों पर जब पड़ा पैर,
तो धम् से नीचे आया!

—अनुराधा देवड़ा

मच्छर मामा

बड़े गवैया मच्छर मामा
पक्के राग सुनाएं,
घर आ जाएं बिना बुलाए,
बिना कहे ही गाएं!

तान लगाते गज, गज लंबी,
रोज कान खा जाते,
जिनको शौक नहीं सुनने का
उन को सुई चुभाते!

कुंभकर्ण-सी अगर नहीं है
नींद तुम्हारी गहरी;
भैया जी, सोने से पहले
तानो रोज मसहरी!

—कैलाश भारद्वाज

बाल पुस्तकालय
बिजनौर

पहरेदारी

महंगाई अब बढ़ी यहां तक,
भूखी दुनिया सारी,
पेट नहीं कुत्ते का भरता,
छोड़ी पहरेदारी!

लंबी तान रोज सोता है,
चोर भले ही आवें,
सबको वही जगाता था,
अब मुर्गे उसे जगावें!

—सूर्यकुमार पांडेय

खेती का कल का पुराना तरीका अपनाने से कम उपज-कम मुनाफा

अगली बार आपको जब भी ट्रैक्टर, थ्रेशर या अन्य ऐसे खेती के नये उपकरणों की जरूरत हो, स्टेट बैंक की अपनी नजदीक की शाखा में पधारिये। स्टेट बैंक किसानों को सीधे वित्तीय सहायता देने की अपनी योजना के अन्तर्गत ऋण या नकदी के जरिये खेती का उत्पादन बढ़ाने के लिए आपके फार्म को आधुनिक बनाने में आपकी मदद करेगा।

खेती का आज का आधुनिक तरीका अपनाने से भारी फसल-भारी मुनाफा

बेहतरीन सेवा के लिए स्टेट बैंक

S 780 HN

टी. बी. का टीका (पृष्ठ ३९ से आगे)

लगवाने को है?"

"टी. बी. में यही तो दोष है कि वह छोटे-बड़े, धनी-निर्धन किसी में भेद-भाव नहीं करती!" डाक्टर साहब हंसकर बोले.

दादा जी बेचारे बुरे फंसे थे. बच निकलने की कोई सूरत ही नहीं दीखती थी. उन्होंने अपनी कलाई इस तरह डाक्टर के आगे की जैसे कोई मरा चूहा फेंक रहे हों. बोले—"आपकी यही इच्छा है तो लगा लीजिए टीका!"

डाक्टर ने टीका लगा दिया. दादा जी को थोड़ा-सा दर्द हुआ जरूर लेकिन वह उसे चुपचाप पी गए. फिर बच्चों की बारी शुरू हुई. डाक्टर बच्चों को बातों में उलझाकर चुपके-से कब टीका लगा देता था, पता भी न चलता था.

जब बबली की बारी आई, तो डाक्टर ने पूछा—"क्यों, बेटे, क्या सोच रहे हो?"

"डाक्टर साहब, इस समय तो बस यही सोच रहा हूं कि किसी तरह आपकी यह पिचकारी छीनकर भाग. . .उई ई ई. . ." बबली के टीका लग गया था.

जितनी देर बच्चों के टीके लगते रहे, दादा जी फूंक मार-मारकर अपना टीका ठंडा करते रहे.

आखिर सब टीके लग गए, तो डाक्टर साहब दादा जी से बोले—"अब उन्हें अगले रविवार लाइएगा. यह ध्यान रहे कि दो-तीन दिन टीके पर पानी न पड़े."

"आप निश्चिंत रहें," दादा जी बोले.

फिर यह फौज वापिस चली. रास्ते में सब बातें करते रहे कि हम तो सोचते थे बहुत दर्द होगा, लेकिन हुआ कुछ भी नहीं.

"मुझे तो बस ऐसा लगा जैसे चींटी ने काट खाया हो," पिंकी बोली.

"यह कोई असली टीका थोड़े ही है. असली टीका तो अगली बार लगेगा, तब दर्द होगा," मधु ने कहा.

घर पहुंचकर सबकी बांह में हल्का हल्का दर्द शुरू हो गया. दवाई असर कर रही थी. यह दर्द दो दिन तक रहा. कई बच्चे तो इसी बहाने स्कूल से छुट्टी लेकर घर बैठ गए.

तीन दिन बाद कइयों के टीके फूल गए. कइयों के टीके नहीं फूले. दादा जी का टीका जरा भी नहीं फूला था. वह बच्चों से बोले—"जिनका टीका जितना फूला है, उनका खून उतना ही खराब है. इसलिए उन्हें एक एक बड़ा टीका और लगेगा."

जिनके टीके फूल गए थे, उनके पैरों तले से जमीन खिसक गई. कइयों ने चुपके चुपके टीके पर तेल मला कि शायद मालिश करने से फूली जगह नीचे बैठ जाए. लेकिन रविवार आते तक उनके टीके फूलकर और भी कुप्पा बन गए.

रविवार आया. एक बार फिर दादा जी ने बच्चों को इकट्ठा किया.

जिस तरह परेड करते समय सैनिकों को कद के अनुसार खड़ा किया जाता है, उसी तरह दादा जी ने भी बच्चों को टीके की सूजन के अनुसार लाइन में खड़ा किया. जिसका टीका सबसे अधिक फूला था यानी राजू को सबसे आगे खड़ा किया और सबसे पीछे आप चले, क्योंकि उनकी बांह एकदम वैसी की वैसी थी.

डिस्पेंसरी आकर दादाजी लाइन में सबसे आगे आ गए. डाक्टर वहां बैठा था ही. एक बार फिर सुइयां गर्म होने के लिए पानी में रखी गईं.

डाक्टर ने राजू की बांह पकड़ी. टीके पर उंगली से दो-चार थपकियां दीं. बोले—"जाओ!"

"क्यों, डाक्टर साहब, इसे दूसरा टीका नहीं लगेगा?" दादा जी ने पूछा.

"जी, नहीं, इसे दूसरे टीके की जरूरत नहीं है. पहला टीका ही फूल गया है!" डाक्टर बोला.

"पहला टीका फूल गया है, तभी तो कह रहा हूं कि इन्हें दूसरा टीका लगाइए," दादा जी बोले.

"नहीं जी, दूसरा टीका तो हम तब लगाते हैं, जब पहला टीका न फूला हो," डाक्टर ने समझाया.

यह सुनते ही खिले हुए चेहरे मुरझा गए. मुरझाए चेहरे खिल उठे. दादा जी के तो जैसे होश ही उड़ गए थे. उन्होंने किसी तरह कहा—"वाह, डाक्टर साहब! ऐसा कैसे हो सकता है?"

डाक्टर ने हैरानी से दादा जी की ओर देखा. राजू बोला—"ठीक तो है, दादा जी. डाक्टर साहब गलत थोड़े ही कहेंगे."

दादा जी ने भी सोचा कि हां, डाक्टर गलत थोड़े ही हो सकता है. उनका चेहरा फक् हो गया. मन ही मन उन्होंने हिसाब लगाया कि पिछली बार कुल एक चौथाई टीका लगाया तब कई दिन बांह दुखती रही थी, जो तीन चौथाई टीका लगेगा, तो जाने क्या हाल होगा? अचानक ही दादा जी उठ खड़े हुए और डाक्टर से बोले—"डाक्टर साहब, मुझे एक जरूरी काम याद आ गया. मैं जा रहा हूं. आप जैसा उचित समझें, करिए."

बिना डाक्टर के उत्तर का इंतजार किए दादा जी इस तरह तेज तेज कदमों से वापस चल दिए जैसे उनके पीछे भूत लगे हों.

"दादा जी, आप दूसरा टीका तो लगवाते जाइए. आपका पहला टीका फूला नहीं है." बबली चिल्लाया.

लेकिन तब तक दादा जी मोड़ पर गायब हो चुके थे.●

९ / ६७०३ देवनगर, नई दिल्ली-५

रंग भरो प्रतियोगिता नं. ८७ का परिणाम

'पराग' की रंग भरो प्रतियोगिता नं. ८७ में जिन तीन चित्रों को पुरस्कार योग्य चुना गया, उनमें से दो को यहां छापा जा रहा है. पुरस्कार विजेताओं के नाम और पते इस प्रकार हैं :

● मुकुलकुमार, सुपुत्र श्री गजेंद्रसिंह मित्तल, ११८ श्रीनगर, अलीगढ़ (उ.प्र.).

● प्रतीमकुमार चौधुरी, द्वारा श्री रामानुज चौधुरी, अनूरन चुंगी, पोस्ट बलारपुर, गोरखपुर (उ.प्र.).

● आनंदमोहन, द्वारा श्री हरिमोहनसिंह, अतिरिक्त जिलाधीश (नियोजन), प्रतापपुरा, आगरा (उ.प्र.).

ऊपर वाला चित्र है मुकुलकुमार का और नीचे-वाला प्रतीमकुमार चौधुरी का. दोनों प्रतियोगियों ने ही अपनी कल्पना से चित्र की पृष्ठभूमि में कुछ न कुछ जोड़ा है और अपने अपने ढंग से बच्चों के चेहरों पर उपयुक्त भाव झलकाए हैं. रंगों का चुनाव भी दोनों ने अच्छा किया है.

प्रयास करने वाले दूसरे बच्चों में से इनके प्रयास अच्छे रहे :

निर्मलकुमार जैन, मेरठ; अशोककुमार शर्मा, मथुरा; प्रदीप कोठपाल, मेरठ; कुमारी गीता सक्सेना, बरेली; कुमारी रंजना अग्रवाल, फैजाबाद; गोपालकृष्ण अग्रवाल, सुंदरनगर कालोनी (मंडी); राजीवकुमार सबदेवा, नई दिल्ली; परवेज नईम, एटा; अवतार सिंह, बंबई-९; अरुणकुमार चौधरी, पटना; राकेशचंद्र जोशी, अल्मोड़ा; रजनीश कक्कड़, बरेली; कुमारी कमलेश भटनागर, शाजापुर; नंदकिशोर गुप्त, बुढ़ही (देवरिया); सुनील-कुमार सक्सेना, प्रतापगढ़; उम्मेदसिंह कच्छवाहा, जोध-पुर; कुमारी कमल अग्रवाल, बरेली; कुमारी रश्मि शर्मा, गाजियाबाद; संतोषकुमारी शर्मा, कल्याणपुर (देहरादून); चांदमल, जालौर; अनिलकुमार अरोड़ा, बीकानेर; अशोक कुमार पाठक, कोटा; संजय घते, आगरा; हीरालाल तुलसीदास बलवा, गांधीधाम तथा बुलबुल भट्टाचार्य, पटना. ●

'पराग' रंग भरो प्रतियोगिता ८६

बच्चो, नीचे का चित्र है न मजेदार! काश यह रंगीन होता, तो क्या कहना था! चलो, तुम ही रंग भरकर इसे हमारे पास २० अगस्त तक भेज दो. हां, अगर तुम्हारा ख्याल हो कि चित्र की पृष्ठभूमि को तुम अपनी कल्पना से और ज्यादा उभार सकते हो, तो रंगों द्वारा उसे चित्रित करने की तुम्हें स्वतंत्रता है. सबसे अच्छे रंग भरने वाले तीन प्रतियोगियों को एकसे सुंदर इनाम मिलेंगे और उनमें से दो के चित्रों को छापा भी जाएगा. लेकिन रंग भरने वालों की उम्र १६ साल से अधिक नहीं होनी चाहिए और उन्हें 'वाटर कलर' ही उपयोग में लाने चाहिए. चित्र के नीचे वाला कूपन भरकर भेजना जरूरी है. पूर्तियां भेजने का पता : **संपादक, 'पराग' (रंग भरो प्रतियोगिता नं. ८६) पो. आ. बा. नं. २१३, टाइम्स आफ इंडिया, बंबई-१.**

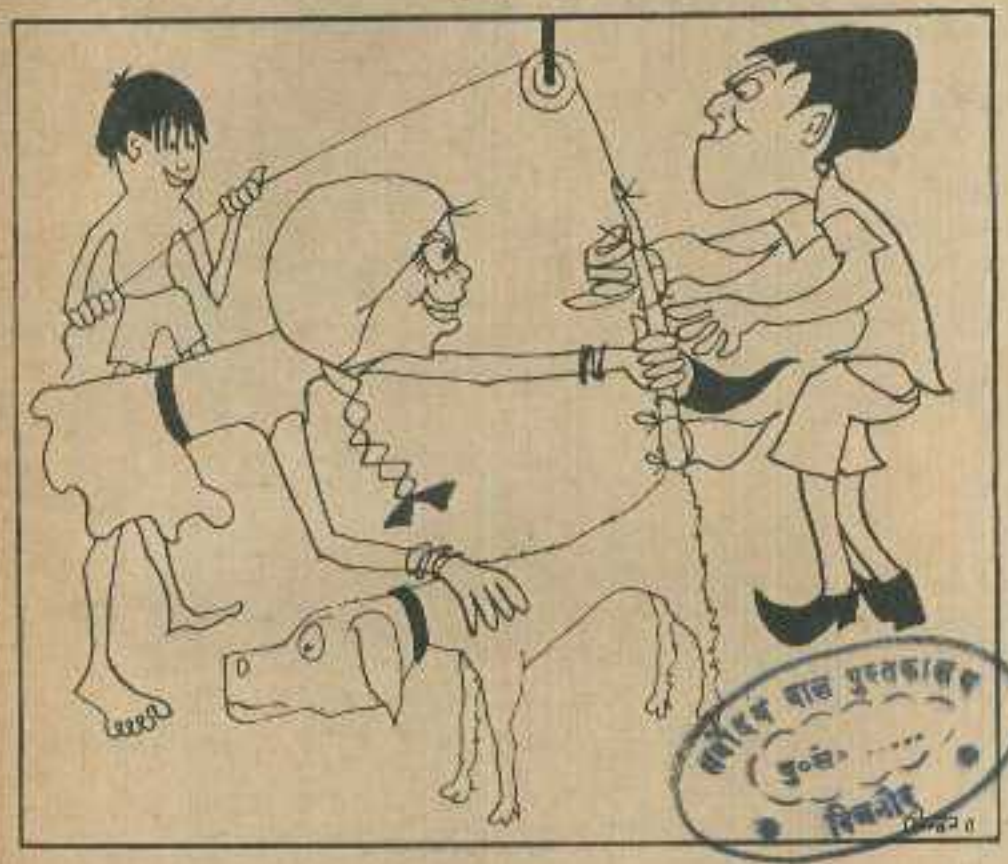

यहां से काटो

यहां से काटो

यहां से काटो

कूपन
'पराग' रंग भरो प्रतियोगिता – ८६

नाम और उम्र ---------------------------------

पूरा पता ---------------------------------

यहां से काटो

अब
शिक्षा और मनोरंजन हेतु
3 बड़े खिलौने
ट्रू-एक्शन हेलीकाप्टर :
यह एक उड़ने वाला खिलौना है जो ३ मिनट में जोड़ा जा सकता है एवं तुरंत आकाश यात्रा पर चल पड़ता है।
अंकगणित स्केल :
यह ३ से ६ वर्ष की आयु के बच्चों हेतु अनुपम शिक्षात्मक खिलौना है।
गाईडेड मिसाईल लांचर :
जो बच्चे अपने जीवन में लक्ष्य तक पहुंचना चाहते है उनका वास्तविक मनोरंजन करने वाला खिलौना।
S AND K
TRADE MARK REGD
निर्माता :-
सिंघानिया एंड कपाडिया मैन्यु० कं०,
१/४०६, जी० टी० रोड, दिल्ली-३२
फोन : २६२२८८

RANJIT—SK—10

ताऊ जी पर जांच आयोग (पृष्ठ ५३ से आगे)

अलग बालक-सेना बनाए. और मैं बच्चों की अदालत में आप पर मुकदमा चलाकर आपको दंड देने की सिफारिश भी करती हूं.'

'तो फिर खूब मिठाई खाने देना ही मेरे लिए सबसे अच्छी और बड़ी सजा साबित होगी.' ताऊ जी ने सफेद गलमुच्छों से ढके होठों पर जीभ फेरते हुए कहा, 'डाक्टरों ने कहा है कि यह मेरे लिए फांसी की सजा से कम साबित नहीं होगी.'

'हूं ! तो दूध बांटने वाले मामले में भी बच्चों का आरोप सही ही होगा. मैं समझती हूं बड़ों की बुरी आदतों और कमजोरियों से फायदा उठाने वाले बच्चों को यहां भी आप कुछ नहीं कह सकते होंगे?' इंका मौसी ने पूछा.

'हां, इसके पीछे मेरी एक अच्छी आदत है. वह है खूब दूध पीने की. जवानी में खूब कसरत करना और दूध पीना, बस वही आदत आज भी है. मैं कुछ ज्यादा दिनों तक बाल-जनता की सेवा कर सकूं, इसके लिए घर पर मेरे नाती-पोते अपने हिस्से का सारा दूध मुझे जबरदस्ती पिला देते हैं. आप ही बताइए, अगर मैं बाहर मैदान में उनके इस महान त्याग का पुरस्कार न दूं, तो क्या बच्चों का यह समाज ज्यादा दिन चल सकेगा?'

'तो अपने पोतों को, जैसा आरोप में लिखा है, लाइन में खड़े होने का यह नया ढंग भी आपने ही सिखाया था?'

'नहीं, यह सब बच्चों की अपनी ही खोज है. मैंने उन्हें कभी नहीं सिखाया.'

'गोलियां बांटने वाले आरोप के बारे में आप क्या कहते हैं?'

ताऊजी ने बताया, 'मेरे पास कोई मंत्रीपद तो है नहीं बांटने को. बच्चे मेरे खिलाफ कोई साजिश न करें इसलिए गोलियां बांटकर ही हुकूमत का दबदबा बनाए रखता हूं. इसी तरह मुझपर लगाए गए आठवें आरोप के बारे में भी मुझे यही कहना है कि जिसकी खाता हूं उसी की बात रखता हूं. मेरे पोती-पोती जब तक मेरे साथ रहेंगे, मुझे विश्वास है मैं बाल-जनता की निरंतर सेवा करता रहूंगा. बच्चों को खुश रखकर मैं घर में अपना बहुमत बनाए रखता हूं, जिससे अपनी पसंद की चीज बनवाने, पिकनिक या मेले में जाने, होली पर हुड़दंग वगैरह वगैरह काम आसानी से करवा लेता हूं. और बच्चे इसलिए साथ दे देते हैं कि अंतिम लाभ उन्हें भी होता है.'

'अर्थात् आप अपने मन की करने के लिए बच्चों को गलत राह देते हैं. देश में स्वार्थियों की क्या कमी है, जो यह एक और फौज आप तैयार कर रहे हैं? जांच कमेटी सिफारिश करती है कि यदि आपने अपनी इन सब आदतों को एक सप्ताह के अंदर अंदर नहीं सुधारा, तो क्लब के वर्तमान पद से तो आपको अलग किया ही जाएगा, साथ ही मुहल्ले के बच्चों, आपके बेटे-बहुओं और पोतों की एक गोलमेज सभा बुलाकर आपपर सब तरफ से सख्ती करने की जोरदार मांग की जाएगी.'

ताऊजी के बयान होने वाले दिन से बच्चों ने ताऊ जी को बहुत उदास पाया, ऐसा हमारे संवाददाता को बच्चों से पता चला.

●

अंत में इस आयोग द्वारा लिये गए बयानों आदि के बीच मिली झलकियां भी एक कालम में थीं. जैसा कि तुम्हें याद होगा चाचा नेहरू कहीं भी जाते थे, तो कई खट्टी-मीठी घटनाएं होती थीं. आजकल चुनाव के दिनों में भी ऐसी कई मजेदार घटनाएं होती हैं. कुछ ऐसी ही मजेदार बातें 'इंका मौसी जांच आयोग' के समय भी हुईं. वे यों हैं :

१– इंका मौसी को कुल ४३ आदमियों के बयान लेने पड़े. जिस दिन आखिरी ४३ वें आदमी का बयान हुआ उसी दिन इंका मौसी ने बताया कि आज वह पूरे ४३ वर्ष की हो गई है.

२– इंका मौसी ने अपनी रिपोर्ट अपनी दूध के हिसाब की कापी के १२२ पृष्ठों में पूरी की, क्योंकि बीच बीच में दूध का हिसाब लिखा हुआ था.

३– इंका मौसी को कुल ७२ घंटे बयान लेने में लगे, और इस बीच उन्होंने ७२ × ४ = २८८ पान चबाए.

४– कुल ८ किलो दूध की चाय समय समय पर इंका मौसी ने बनाकर बयान देने वालों को पिलाई.

५–७ वर्ष से ७१ वर्ष तक के लोगों के बयान लिये गए.

६– बयान देते-देते रो देने वाले बच्चों को चुप कराने के लिए इंका मौसी को ५ किलो मिठाई खर्च करनी पड़ी.

छपते-छपते समाचारों के एक छोटे से कालम में मिला यह सनसनीखेज समाचार भी सुन लो, जो जांच खत्म होने के दूसरे दिन मिला :

हमें अभी-अभी पता चला है कि ताऊ जी पर लगाए आरोपों की जांच कमेटी की सदस्या इंका मौसी की कोठरी से आयोग की रिपोर्ट का एक एक पन्ना गायब हो गया है. मुहल्ले के सब बच्चे रिपोर्ट चुराने वाले को ढूंढने में लगे हुए हैं. हमारे संवाददाता ने बताया कि चोर का पता शीघ्र ही लगने की पूरी संभावना है.

सबसे बड़ी चिंता इंका मौसी को दूध के इस हिसाब की है, जिसके आधार पर वह अपने ग्राहकों से महीनों की दूध-सप्लाई के दाम वसूल करती थीं. ●

३३४ तोपदड़ा, अजमेर.

धन को तिजोरी में बन्द क्यों रखते हैं

पी एन बी में बचत कीजिये

घर में बन्द रखने से आपका धन असुरक्षित, बेकार तथा अनुपयोगी हो जाता है। पी एन बी आपके धन को रचनात्मक कार्यों जैसे उद्योग, कृषि तथा निर्यात में लगाकर इसको गतिशीलता प्रदान करता है और साथ ही राष्ट्र की अर्थ-व्यवस्था को सुदृढ़ करने में भी सहायक होता है।

इसके अतिरिक्त आप अपनी बचत पर ब्याज भी कमाते हैं। इसीलिये अधिक से अधिक लोग पी एन बी में बचत करते हैं-यह वह बैंक है जो कि मुस्कान के साथ आपकी कुशल सेवा प्रदान करता है।

पंजाब नैशनल बैंक

१८९५ से राष्ट्र की सेवा में निरत

चेयरमैन : एस. सी. मित्रा

PR/PNB/697H

(इस स्तंभ में बच्चों के लिए नव-प्रकाशित पुस्तकों का परिचय दिया जाता है, जिससे बच्चे उन्हें पढ़ें और अपनी ज्ञान की प्यास बुझाएं. परिचय के लिए पुस्तकों की दो दो प्रतियां भेजी जानी चाहिएं. —संपादक)

● **सचित्र विश्वकोश (दस भाग); मूल प्रणेता : श्रीमती मारिस पार्कर; पृष्ठ संख्या : प्रत्येक भाग लगभग १००; मूल्य : प्रतिखंड ७ रुपए; प्रकाशक : राजपाल एंड संस, काश्मीरी गेट, दिल्ली-६.**

बालक होश संभालते ही तरह तरह के सवाल करने शुरू कर देता है और अगर उसके सवालों के उचित जवाब तत्काल उसे नहीं मिलते, या बड़ों की ओर से उसे अपने सवालों के जवाब में केवल दुत्कार या डांट-फटकार ही मिलती है, तो वह अनमना हो जाता है. इस तरह उसकी जानने की इच्छा धीरे धीरे खत्म हो जाती है और उसके व्यक्तित्व का विकास रुक जाता है. मां-बाप अपनी रोजी-रोटी की झंझटों या अपने अज्ञान के कारण बच्चों की सवाल करने की प्रवृत्ति को दबाते हैं और स्कूल में अध्यापकों को इतनी फुरसत कहां जो हर बालक के हर प्रश्न का उत्तर देते फिरें. वहां तो पाठ्य-क्रम के पूरा होने में ही संदेह रहता है.

विश्वकोशों का निर्माण और उनका प्रकाशन इस समस्या का एकमात्र हल है. इन कोशों में जानने योग्य बातों की विस्तृत जानकारी अधिकारी विद्वान् एक जगह संकलित कर देते हैं. यदि हर घर या स्कूलों के पुस्तकालयों में ये विश्वकोश हों, तो मां-बाप या अध्यापक बालकों को डांटने-फटकारने या हतोत्साहित करने के बजाय, उन्हें इन कोशों में अपने सवालों के जवाब ढूंढने को प्रेरित कर सकते हैं. इससे बालकों को खुद अपने सवालों के जवाब खोजने की आदत बनेगी और अभिभावकों और अध्यापकों का समय भी बचेगा. और वे स्वयं भी एक सुलभ संदर्भ ग्रंथ में इसका उपयोग कर सकते हैं.

लेकिन हमारी भारतीय भाषाओं में ऐसे विश्वकोश हैं कहां ? राष्ट्र भाषा हिंदी में भी अब तक नहीं था. इसी कमी को पूरा करने में उपरोक्त प्रकाशकों ने यह सचित्र विश्वकोश प्रकाशित किया है.

यह विश्वकोश प्रसिद्ध अंग्रेजी कोश 'गोल्डन बुक एनसाइक्लोपीडिया' पर आधारित है. लेकिन वह सिर्फ उसका अनुवाद मात्र नहीं है, बल्कि भारतीय बच्चों की आवश्यकतानुसार इसका भारतीयकरण किया गया है.

इसके पहले भाग में पृथ्वी, आकाश और खनिज पदार्थों के संबंध में आवश्यक जानकारी दी गई है, और दूसरे में जीव-जंतुओं और पेड़-पौधों के बारे में. तीसरा भाग मनुष्य, स्वास्थ्य और खेल-कूद से संबंधित है, तो चौथा राजनीति, प्रशासन और धर्म से. पांचवें भाग में कृषि, उद्योग और व्यापार को लिया गया है, तो छठे में आविष्कार, खोज और खोज-यात्रियों को स्थान मिला है. सातवां भाग विज्ञान, वैज्ञानिक और आविष्कारकों के कामों पर प्रकाश डालता है. आठवां साहित्य, कला और दर्शन की कहानी सुनाता है. नवें भाग में इतिहास, व्यक्ति और घटनाओं पर प्रकाश डाला गया है, जबकि दसवां संसार के विभिन्न देशों और वहां के निवासियों के बारे में जानकारी देता है.

इस तरह कोश के इन दस भागों में आधुनिक ज्ञान-विज्ञान की पर्याप्त प्रामाणिक, तथ्यपूर्ण और नवीनतम बालोपयोगी जानकारी आ जाती है. प्रत्येक भाग में जगह जगह अनेक चार रंगे चित्र दिए गए हैं, जिनसे मूल विषय को समझने में सहायता मिलती है.

कोश की भाषा सरल, सादा और बामुहावरा है, जिससे विषय को समझने में आसानी होती है. बच्चों के साथ स्कूलों के अध्यापक और मां-बाप भी इसके उपयोग से लाभ उठा सकते हैं.

हां, मूल्य पूरे सेट का ७० रुपये जरूर है, जो प्रकाशकों के दृष्टिकोण से तो ठीक है, लेकिन अधिकांश भारतीय परिवारों की आर्थिक स्थिति ऐसी नहीं, जो इस मूल्य पर यह विश्वकोश खरीदकर अपने बच्चों के हाथों में दे सकें. लेकिन माध्यमिक और उच्च माध्यमिक स्कूलों, सार्वजनिक पुस्तकालयों या बाल-क्लबों तथा बच्चों के उत्थान में लगी हुई संस्थाओं को इसे अपने यहां स्थान देने में कोई कठिनाई नहीं होगी. संदर्भ ग्रंथ होने के कारण इसकी जिल्द यदि कपड़े या किरमिच की होती, तो ज्यादा अच्छा होता. कम से कपड़े की तो रखी ही जा सकती थी.

● **तुम्हारे जन्म की कहानी (पृष्ठ संख्या २४) : लेखक : डा. लक्ष्मीनारायण शर्मा; मूल्य : एक रुपया; प्रकाशक : वैज्ञानिक प्रकाशन, स्वास्थ्य विहार, सीलमपुर (ओल्ड), दिल्ली-३१ :**

लेखक ने अपने निवेदन में लिखा है कि 'संसार के शिक्षा शास्त्री इस विषय पर एक मत है कि बच्चों को प्रारंभ से ही प्रजनन और सेक्स संबंधी जानकारी मिलनी चाहिए.' इसी से प्रेरित हो कर उसने यह पुस्तक ९ से १२ वर्ष तक के बच्चों के लिए लिखी है. इसमें बालक के जन्म की प्रक्रिया को खोल कर सरल और सुबोध भाषा में समझाया गया है.

वार्तालाप दिलचस्प हैं. बच्चे इसे पढ़कर नारी शरीर की प्रजनन प्रक्रिया को ठीक ठीक हृदयंगम कर सकेंगे. फिर मां-बाप को यह कहने की जरूरत नहीं रहेगी कि राधा को धन्नो भंगिन से खरीदा था या गोपाल को अस्पताल से लाए थे. साथ ही उनके मन में प्रजनन संबंधी तथ्यों के प्रति जो असत् धारणा बैठी हुई है, वह भी दूर हो सकेगी, जिससे आगे चलकर उनका जीवन अनेक कुंठाओं से मुक्त रहकर संतुलित हो सकेगा. लेखक का प्रयास नवीन और स्तुत्य है. —लक्ष्मीचंद्र गुप्त

सब से बड़ा मूर्ख

— अरुणकुमार

बच्चो, यह खेल तो मजेदार है, लेकिन ध्यान रखना कि अपने बड़ों को मत दिखा देना, वरना कान-पकड़ी हो जाएगी!

करना यह है कि सामने के पृष्ठ को 'पराग' में से काट लो. इसके पीछे लेई लगाकर इसे किसी मजबूत और हल्के गत्ते पर सफाई से चिपका दो. सीधा सूखे, इसके लिए सदा की भांति, इसे पटिया या भारी पुस्तकों के नीचे दबा दो.

जब सूख जाए, तो निकाल लो. इस दरवाजे की तीन ओर की दानेदार रेखाओं को चाकू की सहायता से आरपार काट लो. चौथी ओर, कब्जों की तरफ हल्का-सा चाकू का निशान रेखा पर बना दो, जिससे दरवाजा कब्जोंवाली रेखा पर ठीक-से खुल सके.

दरवाजे के पीछे, नमूना चित्र की तरह एक साफ-से, मुंह देखने के शीशे (दर्पण) का चौकोर टुकड़ा टेप या गोंद लगी पट्टी से चिपका दो. शीशे का अंधा पक्ष पीछे की ओर और चमकदार पक्ष आगे की ओर रहे. फिर चित्र के आकार का ही एक गत्ता और लो. उसे पीछे लगाकर चित्र पर चारों ओर किसी खूबसूरत कागज या अबरी की पट्टी चिपकाते हुए फ्रेम-सा बना दो.

लो, खेल तैयार हो गया. अपने किसी मित्र से कहो कि देखे कितनी बढ़िया चीज तुम्हारे पास है. अपने हाथ में लेकर ज्यों ही वह बंद दरवाजे को देखेगा, तो फौरन दरवाजा खोलकर देखना चाहेगा कि 'संसार का सबसे बड़ा मूर्ख' कौन है, और उसे जल्दी ही पता भी लग जाएगा!

लेकिन उसके बाद अपना खेल उससे वापस लेने का, और अपनी खाल बचाने का प्रबंध पहले कर रखना!

अच्छा, अगली बार एक और बढ़िया खेल लो!

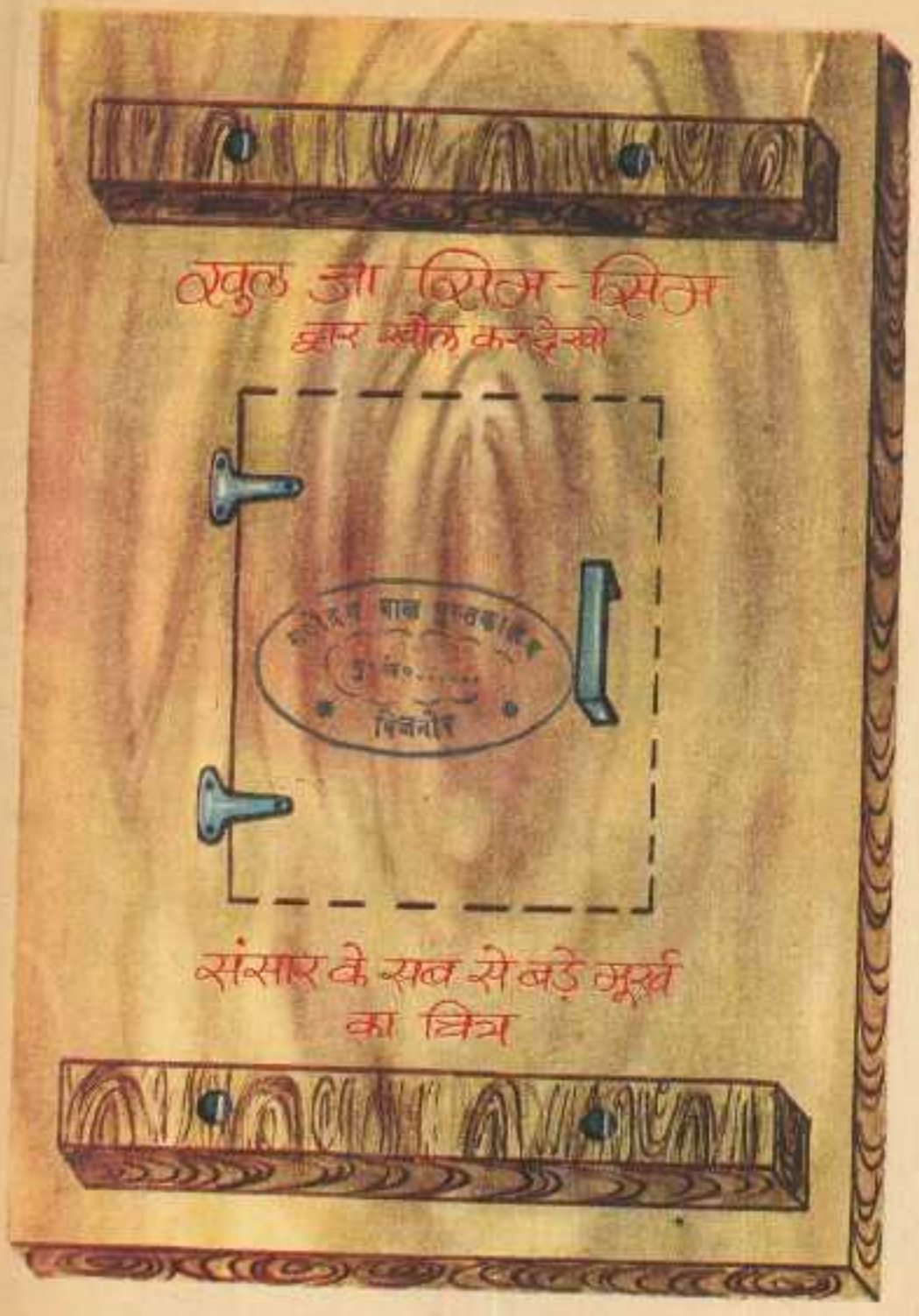

खुल जा सिम-सिम
द्वार खोल कर देखो
संसार के सब से बड़े मूर्ख
का चित्र

अरे दी दी।
जरा इसे चखो तो।
यह तो बिल्कुल रसभरी जैसा है। नींबू का पिपरमिं
और अनानास का पिपरमिंट-कितने प्रकार के-लाल
नीला, पीला आदि रंगों में। वाह भई वाह। पारले के
फ्रूट ड्रॉप पिपरमिंट खाने में कितना मज़ा आता है
PARLE
पारले
फ्रूट ड्रॉप
पिपरमिंट
कितना मज़ेदार ज़ायका
पारले का पैकेट खरीदो आज!
everest/510a/PP HN

अब !
सिर्फ़ १२ ही दिनों में अधिक सफ़ेद दाँत !

शक्तिशाली नये फ़ॉर्मूले से बने

पेप्सोडेण्ट से

सिर्फ़ १२ ही दिनों में दाँत अधिक स्वस्थ, अधिक सफ़ेद हो जाते हैं

पेप्सोडेंट में अब तीन नयी खूबियाँ हैं :
नया फ़ॉर्मूला, नया ज़ायका, नया पैक !

बरसों की खोज के परिणाम, नये फ़ॉर्मूले के अनुसार पेप्सोडेण्ट में अब इरियम प्लस एल्.डी से मिला होता है। यह शक्तिशाली तत्व दाँतों के ऊपर की धुँधली परत को हटाता है और दाँतों की स्वाभाविक चमक और सुन्दरता निखारता है; साथ ही भोजन के सड़नेवाले बचे हुए टुकड़ों को निकाल कर दाँतों को सड़ने से बचाता है। इसका शीघ्र असर करनेवाला ढेर-सा झाग दाँतों के बीच की ऐसी छोटी दरार को पूरी तरह साफ़ करता है।

पेप्सोडेंट का पहले से अधिक तेज़ मिन्ट ज़ायका आपको बहुत पसन्द आएगा। नया पेप्सोडेण्ट आज ही खरीदिए। फिर देखिए, १२ ही दिनों में इसका आश्चर्यजनक असर !

नया फ़ॉर्मूला	नया ज़ायका	नया पैक

हिन्दुस्तान लीवर का एक उत्कृष्ट उत्पादन — रजिस्टर्ड ट्रेडमार्क

HTA-HDL-9873

बेनेट कोलमैन एंड कंपनी लिमिटेड, स्वत्वाधिकारी के लिए प्यारेलाल साह द्वारा टाइम्स आफ इंडिया प्रेस, बंबई में मुद्रित और प्रकाशित; पो. आ. बाक्स २०७, बंबई–१; दिल्ली आफिस : ७, बहादुरशाह ज़फर मार्ग, नई दिल्ली–१; कलकत्ता आफिस : १३/१ और १३/२, गवर्नमेंट प्लेस ईस्ट; लंदन आफिस : ३, अब्बे मार्लो स्ट्रीट, लन्दन–१.

REGD. No. MH 468

बस हल्के हल्के वेपोरब मलिये इसकी गरमाहट से मुन्ने को फ़ौरन आराम मिलता है...आसानी से साँस लेने लगता है और रात भर चैन की नींद सोता है।

आप ही मुन्ने को आराम दे सकती हैं। जब उसे सर्दी लगी हो बस आप ममताभरे हाथों से विक्स वेपोरब छाती, गले, नाक और पीठ पर मलिये। देखते ही देखते भारीपन दूर होने लगता है और आपका मुन्ना फिर आसानी से साँस लेने लगता है क्यों कि विक्स वेपोरब की आरामदायक दवाइयां केवल सात सेकण्डों में ही सर्दी से जकड़े भागों पर असर करने लगती हैं। अब मुन्ने को आराम से बिस्तर पर सुला दीजिए। जब कि मुन्ना चैन से सोता है, वेपोरब अपना असर रात भर करता रहता है। सुबह तक सर्दी जुकाम दूर ही जाता है और आपका प्यारा लाडला सुख और तन्दुरुस्त उठता है।

विक्स वेपोरब सर्दी जुकाम के लिए आज रात ही मलिये